कहानी–संग्रह

भास्कर राव इंजीनियर

भास्कर राव इंजीनियर

(कहानी–संग्रह)

अरुण अर्णव खरे

लोकोदय

लोकोदय प्रकाशन

लखनऊ

लोकोदय प्रकाशन
65/44, शंकर पुरी, छितवापुर रोड
लखनऊ–226001
दूरभाष : 9076633657
ई–मेल : lokodayprakashan@gmail.com

कॉपीराइट © अरुण अर्णव खरे

प्रथम संस्करण : 2018

आवरण : कुँवर रवीन्द्र

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर & प्रिन्टर्स

ISBN : 000-00-00000-00-0

BHASKAR RAO ENGINEER
By ARUN ARNAW KHARE

मूल्यः ₹100.00

पूज्यनीय माता जी के श्री चरणों में समर्पित
जो हमें इस संग्रह की प्रकाशन-प्रक्रिया के बीच में छोड़ गईं

अरुण अर्णव खरे की दोस्ताना कहानियाँ

अरुण अर्णव खरे लम्बे समय से लिखते आ रहे हैं और हिंदी साहित्य के अच्छे-बुरे से बहुत वाकिफ हैं। हिंदी कहानी आज कलात्मकता के जिस मुकाम पर है वह उल्लेखनीय है। इसलिए आज के कथाकार के सामने अनेक चुनौतियाँ होती हैं। इस परिवेश में अरुण अर्णव खरे अपनी कहानियों के साथ रूबरू हो रहे हैं जो स्वागत योग्य है।

प्रस्तुत कहानी संग्रह 'भास्कर राव इंजीनियर' में चौदह कहानियाँ संकलित हैं। अरुण अर्णव खरे की भाषा सरल है जो उन्हें ज्यादा पाठकों तक पहुँचाने का काम कर सकती है। कहानीकार ने जो विषय उठाये हैं वे आम मध्यवर्गीय जीवन में प्रायः घटित होते दिखाई देते हैं। सामान्य दिखने वाले इस तरह के विषयों पर लिखना कठिन होता है क्योंकि विषय में कुछ नया नहीं होता है। कहानी में जो भी कला कौशल पैदा करना है वो लेखक को ही करना है। उसकी कहन-शैली, बिम्ब, भाषा सौन्दर्य आदि से आम विषय या घटना भी कहानी बन कर सामने आती है। लेखक यदि कलात्मकता से अपनी बात नहीं कह पाए तो विवरण अखबारी रिपोर्टिंग के करीब नजर आ सकता है। कहना होगा कि अरुण अर्णव खरे ने अपनी कहानियों को न केवल रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है बल्कि सामाजिक- मनोवैज्ञानिक स्थितियों और समस्याओं को रेखांकित किया है। खासकर युवा मानसिकता को उन्होंने कई कहानियों में खूबसूरती से उकेरा है। दूसरा राज महिर्षि, भास्कर राव इंजीनियर, देवता, कोचिंग, आफरीन, समरसता, आदि ऐसी कहानियाँ हैं जिसमें युवाओं को सौमनस्यपूर्ण प्रस्तुत किया गया है। अरुण अर्णव खरे का कथन रागात्मक है, कहानियाँ पाठक को उत्तेजना से बचाती है और विभिन्न सामाजिक समस्याओं को रेखांकित करती हैं। ज्यादातर कहानियाँ शिक्षाप्रद हैं और समाधान सुझाती

हैं। ‘त्याग’, ‘सलामी’ और ‘पुरुस्कार’ खिलाड़ियों पर केन्द्रित कहानियाँ हैं। वहीं ‘स्टेण्ट’ अस्पताल की ठगी से रूबरू करवाता है। अरुण अर्णव खरे की ये कहानियाँ दोस्ताना हैं और अपने मूल में फिक्रमंद हैं। लेखक इस संग्रह में विविधतापूर्ण है जो पुस्तक को पठनीय बनाता है। आशा है कि सामान्य पाठक जगत में इसका स्वागत होगा।

-जवाहर चौधरी

16, कौशल्या पुरी चितावद रोड, इंदौर-452001

सही अर्थों में आलोचना की नहीं पाठक की कहानियाँ

अरुण अर्णव खरे की ये कहानियाँ मध्यवर्गीय जीवन के एक ख़ास समय की कहानियाँ हैं। जब एक युवा अपने कॅरियर निर्माण के लिए जीवन की आपाधापी, उतार-चढ़ाव और आशा-निराशा के बीच सतत संघर्षशील रहता है। कल्पनालोक में गोते लगाते युवावर्ग की तमाम चिंताओं को घेरे ये कहानियाँ अपने भीतर गहरी संवेदनाओं से लबरेज़ हैं। जीवन के इस यथार्थ को देख पाना एक बड़ी नज़र का ही काम है। संग्रह की कहानियों में कहीं अंधविश्वासों का उलझट्टा है तो कहीं अंतर्जातीय विवाह की समस्या। कहीं बचपन के दोस्तों को खजने की स्वाभाविक ललक तो कहीं अपल्लवित प्रेम की हिलोरें। भ्रष्टाचार, रोजगारकी समस्या, नौकरी में असंतुष्टि जैसे विषयों के साथ वे आरक्षण के उस विद्रूप चेहरे को भी उजागर करते हैं जिसने सामाजिक समरसता के नाम पर बहुतों को आहत किया हुआ है ।

कहानियाँ इन अर्थों में भी आकर्षित करती हैं कि इसमें कहीं दिवास्वप्न नहीं है, न ही किसी बड़े समाधान का दावा। अर्थग्राह्यता क़ी खिड़कियाँ खोले सीधे हृदय तक उतरने वाली संवेदनाओं को समेटे संग्रह की कहानियाँ पाठक को पलकें झपकने का भी अवकाश नहीं देती।

अरुण अर्णव खरे की कहानियाँ सही अर्थों में आलोचना की नहीं पाठक क़ी कहानियाँ हैं

-डॉ राजेश श्रीवास्तव, भोपाल

अपनी बात

मुझे लगता है कि हर व्यक्ति एक कहानी है और हर घटना किसी ना किसी कहानी का प्लेटफॉर्म होती है। देखा जाए तो जीवन में नित्य प्रतिदिन ही कहानी के इतने पात्रों से मिलना-जुलना होता रहता है कि कहानी रचने के लिये किसी विशेष प्रयास की आवश्यकता ही नहीं होती- बस एक अंतर्दृष्टि चाहिये कथा सूत्र पकड़ने के लिए। कहानी में लेखक के पास अपना लेखकीय कौशल दिखाने की जितनी लिबर्टी होती है उतनी अन्य किसी विधा में नहीं होती इसीलिए कहानी का सूक्ष्म घटना-सूत्र भी अपने विन्यास के कारण अप्रतिम प्रभाव छोड़ने में सफल होता है।

प्रस्तुत संग्रह में शामिल कहानियाँ भी हमारे आस-पास चल फिर रहे, हमारे साथ उठ-बैठ रहे कथानायकों और नजरों के सामने घट रही घटनाओं की कहानियाँ हैं। मेरा विश्वास है कि कहानियों को पढ़ते हुए आप निश्चित ही यह महसूस करेंगे कि इस कहानी के पात्र तो मेरे परिचित हैं और इनसे कभी ना कभी मिल चुके हैं- चाहे वह 'दूसरा राजमहर्षि' का नायक शौर्य हो या 'चीलिंग सेंटर' का मुख्य पात्र दिनकर । 'मकान' के मनोहर लाल भी आपको अपने किसी परिचित की याद दिला सकते हैं तो 'स्टेण्ट' के बृज भूषण से भी आप कहीं ना कहीं जरूर मिले होंगे। जातीय भेदभाव और आरक्षण के दंश को भी लगभग सभी ने किसी ना किसी रूप में महसूस किया होगा- इसकी विसंगतियों में झाँकने का प्रयास देवता और समरसता जैसी कहानियों में किया गया है। वर्षों खेल-लेखन में सक्रिय रहने के कारण कुछ कहानियों में खेलों में व्याप्त राजनीति के साथ ही उसके निर्मल पक्ष को भी देखा जा सकता है।

संग्रह में सम्मिलित कुछ कहानियाँ समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं जिन पर मिली उत्साहवर्द्धक प्रतिक्रियाओं की परिणति स्वरूप ही मैं यह संग्रह

लाने की सोच सका। कुछ कहानियों का अनुवाद अन्य भाषाओं में भी किया गया। 'देवता' कहानी का अनुवाद एक पाकिस्तानी लेखक आमिर सिद्दीकी ने उर्दू में किया। 'दूसरा राजमहर्षि' कहानी संस्कृत में अनुवाद की गई। अपने लेखन का इतना प्रतिसाद पाना मेरे लिए सर्वथा अप्रत्याशित था। इस सबसे मुझे असीम ऊर्जा तो मिली ही साथ में एक जिम्मेदारी का अहसास भी कराया।

कहानियों का यह संग्रह आपके हाथों में सौंपते हुए हर्षित हूँ और आपके स्नेह के प्रति आशावान भी हूँ। इससे पूर्व इस संग्रह को वर्तमान समय के महत्वपूर्ण कहानीकार भालचंद्र जोशी जी का स्नेह प्राप्त हो चुका है उनकी उत्साह वर्द्धक भूमिका के रूप में। मैं उनका हृदयतल से शुक्रगुजार हूँ। इसी क्रम में मैं वरिष्ठ कहानीकार राजेंद्र वर्मा जी का भी आभारी हूँ कि उन्होंने संग्रह की सभी कहानियों पर पैनी नजर रखते हुए अपनी विस्तृत राय जाहिर की। मैं मेरे प्रिए कहानीकार जवाहर चौधरी जी का भी आभारी हूँ कि उन्होंने भी संग्रह की कहानियों पर अपनी बेवाक राय रखी। अनुजवत डाद्र राजेश श्रीवास्तव के प्रति भी मैं आभार व्यक्त करता हूँ - उनकी संक्षिप्त लेकिन अति महत्वपूर्ण व्याख्या के लिए।

इस संग्रह को आप तक पहुँचाने में लोकोदय प्रकाशन के श्री बृजेश जी के महती सहयोग को विस्मृत नहीं किया जा सकता। उनके दोस्ताना सहयोग के फलस्वरूप ही यह संकलन साकार रूप ले सका है। इसी तारतम्य में अपने बेटे अनिमेष खरे, अनुजवत मित्रों अनुज खरे, मुकेश दुबे और घनश्याम मैथिल 'अमृत' तथा वरिष्ठ साहित्यकार कांति शुक्ला 'उर्मि' के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करना आवश्यक है जिनका उपयोगी परामर्श कहानी की रचना प्रक्रिया में बहुमूल्य सिद्ध हुआ। अंत में मैं अपनी जीवन संगिनी माला के प्रति भी स्नेहिल आभार प्रदर्शित करना चाहता हूँ जिनके हिस्से के अनगिनत पलों को चुराकर मैं यह संग्रह पूर्ण कर सका।

भोपाल मार्च 31, 2017

अरुण अर्णव खरे
डी-1/35 दानिश नगर, होशंगाबाद रोड, भोपाल (म. प्र.)
दूरभाष- 9893007744, ई-मेल: **arunarnaw@gmail-com**

अनुभूति–बहुल दृष्टिकोण की रचनात्मक अभिव्यक्ति से सराबोर कहानियाँ

इस समय का समाज और जीवन इतना विविधवर्णी हो गया है कि सामान्य-सी हलचल भी एक ऐसा रंगीन घटाटोप तैयार करती है कि उसके पार जीवन-यथार्थ देखना-परखना कठिन होता जा रहा है। इसी बीच हिन्दी कहानी में शिल्प और भाषा के स्तर पर काफी बदलाव आए हैं, जिससे परम्परागत कहानी की संरचना टूटी है और धारणाएँ भी। इस समय भूमण्डलीकरण के दौर में कहानी मोहभंग और एक नए यथार्थ से सामना करने पर एक भिन्न त्रासदी से गुजर रही है। ऐसे समय में अरुण अर्णव खरे के इस संग्रह की कहानियों में कहानी की 'निजता' के लिए एक किस्म का अबोध आग्रह है। इस आग्रह में परम्परागत कहानी की संरचना की चिन्ता और सामयिक मूल्य-बोध का युग्म-सन्ततुलन जिस अभिव्यक्ति की कला को साध लेने के कौशल के उत्साह को प्रस्तुत करता है, वह कहानीकार के साथ उन पाठकों को भी सुखद अचरज से भर देता है जो इन कहानियों के संसार से गुजरते हैं।

'दूसरा राजमहर्षि' कहानी में बच्चों के लिए सफलता की होड़ में माँ-बाप इस कदर महात्वाकांक्षा पाल लेते हैं कि एक गैर जरूरी दबाव बच्चे के लिए घातक परिणाम लेकर आता है। इसी तरह 'देवता' कहानी में बड़े अफसर द्वारा तोरनसिंह का शोषण और उसी शोषण में तोरनसिंह के बेटे का एक कथित उदारता के छल के आवरण में अहित होना शोषण और दमन की उस मानसिकता को प्रकट करता है जो परम्परा में आज भी जीवित है। अरुण अर्णव खरे कहानीकारों की उस परम्परा में से हैं जो निम्नवर्ग और मध्यवर्ग की जीवन-कुंठाओं और हताशाओं की कहानियाँ लिख रहे हैं। अरुण अर्णव खरे सर्वहारा वर्ग की जिजीविषा, संघर्ष और मूल्यबोध को आत्मीय पक्षधरता के साथ रच रहे हैं। इन कहानियों में हमारे समय का वही परिचित जीवन-यथार्थ है जो हिन्दी कहानी की

चिन्ता में लम्बे समय से मौजूद है।

संकलित कहानियाँ उस भाव-भूमि पर रचित हैं जहाँ सामान्य जन के दुख-सुख, पीड़ा, हताशा को एक भावुक आवेग के साथ अपनी लेखकीय पक्षधरता को उस मार्मिकता तक ले जाया गया है जहाँ मानवीयता के सारे परिचित आयाम धरे हैं। इन कहानियों के पात्रों के परस्पर रिश्ते और कहानियों की बनावट और बुनावट मानवीय सन्दर्भों में देखने का प्रस्ताव रखती हैं। चाहे तोरन हो या सूरज के प्रति सहानुभूति रखने वाली लड़की नीला हो ये उसी मानवीयता के पक्षधर हैं जो दमन के बीच मुक्ति का स्वप्न देख रहे हैं। अरुण अर्णव खरे छोटे शहर, कस्बे या गाँव को लेकर भी कहानियाँ जिस आत्मीय लगाव से लिखते हैं वह उनकी रचनात्मक ऊर्जा का नया बयान है। यह विश्वास उनके भीतर कहीं गहरे बैठा है कि सर्वहारा के प्रति बरती गई उपेक्षा और अदेखी को इसी रचनात्मक ऊर्जा से अभिव्यक्त किया जा सकता है। 'कौवे' जैसी कहानी जो ऊपरी तौर पर अंधविश्वास के पोषण की कहानी लगती है, लेकिन अपने आंतरिक रचाव में वह आपसी रिश्तों को उस मानवीय मार्मिकता तक ले जाती है जहाँ अभी 'सब कुछ नष्ट नहीं हुआ है' की आश्वस्ति बची है। यह आश्वस्ति लेखक की पक्षधरता को भी स्पष्ट करती है कि इस क्रूर बाजार समय में वह किस वर्ग के साथ खड़ा है।

अरुण अर्णव खरे की कहानियों का यथार्थ बोध उस परम्परा से आया है जहाँ प्रेमचंद के 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' के प्रति आदर और आसक्ति बची है। इसी कारण इस संग्रह की कहानियों में नई पीढ़ी के उन कुछेक कथाकारों जैसी उतावली नजर नहीं आती है जो परम्परा से हासिल हर मूल्य को आरोपित मूल्य-श्रेणी में रखकर धिक्कार भाव के साथ रंगीन भाषा के मेले में रमे रहते हैं। ऐसे थोड़े बहुत कथाकारों ने नवीन के उत्साह में 'पुरातन' के विरोध का सुविधा-रास्ता अपना लिया। इस रास्ते पर पुरातन के प्रति आदर चाहे न हो लेकिन किसी पुनर्परीक्षण का आग्रह या उत्सुकता भी नहीं है। अरुण अर्णव खरे की कहानियों में चीजों और स्थितियों को ठिठककर, ठहरकर देखने-परखने का धैर्य नजर आता है। अपनी अनुभूति और परिवेश के प्रति एक स्पष्ट संकेत नजर आता है। यथार्थ को देखने की वह 'पवित्र' दृष्टि अपने अनुभवों को नितांत निजी और वैयक्तिक भाव-भूमि पर समाज को 'खबर' करने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ हैं।

अरुण अर्णव खरे की यह दृष्टि अनुभवों, संस्कार और जीवन मूल्यों को शासित और नियंत्रित करती है। मौलिकता, अनुभूति बहुल दृष्टिकोण को एक रचनात्मक

दृष्टि ही उस सकारात्मक छोर पर ले जाती है जहाँ लेखक का दायित्व-बोध स्पष्ट होता है। अरुण अर्णव खरे के प्रयास में यह आकुलता है। उनकी लेखकीय विकलता समाज के कमजोर वर्ग के दुख-सुख, पीड़ा के साथ उसके संघर्ष की कामना भी करती है। एक लेखक की रचनात्मक दृष्टि की सकारात्मक सक्रियता सामाजिक सन्दर्भों में जाकर अपने आशय भलीभाँति स्पष्ट करती है।

'चीलिंग सेंटर' कहानी के नायक दिनकर के संघर्ष की पराजय हो या पूर्व से पराजित साबू हो जिसकी कोरी, अनिर्णायक सहानुभूति शोषक मैनेजर और चेयरमेन के हाथ ही मजबूत करती है क्योंकि दिनकर के प्रति सहानुभूति में चेतावनी भी मिश्रित थी । अरुण अर्णव खरे के दुख-सुख, पीड़ा, पराजय से संघर्ष करते पात्र किसी अनोखी या पराई दुनिया के जीव नहीं हैं। वे हमारे-आसपास, हमारे समाज के लोग हैं। परिचित से लगने वाले इन पात्रों में अनेक पाठकों को अपनी छवि नजर आएगी।

अरुण अर्णव खरे की इन कहानियों को पढ़ते हुए भाषा की संवेदन-उष्मा और भावनात्मक विश्वसनीयता के लिए श्रम करते एक जिम्मेदार लेखक के सामाजिक सरोकार भी स्पष्ट होते हैं। समाज से उनका यह आत्मीय लगाव और रचनात्मक यात्रा जिसमें घर-परिवार और समाज के साथ सम्पूर्ण देश या मनुष्यता के प्रति एक उद्विग्न आसक्ति है। इन कहानियों को लेखक के इसी श्रम के सन्दर्भ में पढ़ा जाएगा तो लेखक के दायित्व-बोध और रचनात्मक ऊर्जा के साथ आगे की यात्रा की निरन्तरता भी स्पष्ट हो जाएगी।

भालचन्द्र जोशी
13, एच.आई.जी. ओल्ड हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी,
जैतापुर खरगोन (म.प्र.) 451001
मोबाइल नम्बर - 8839547548

सामाजिक नवनिर्माण को लक्षित कहानियाँ

अरुण अर्णव खरे हिन्दी के सुपरिचित रचनाकार हैं। व्यंग्य-साहित्य में उनका विशिष्ट स्थान है। अब उन्होंने इस कृति के माध्यम से कहानी विधा में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करायी है। यों, व्यंग्य जीवन की आलोचना है जिसके लिए व्यंग्यकार में जीवन के विभिन्न पहलुओं की गहरी पड़ताल की दरकार होती है और जिसके चित्रण में व्यंग्यकार उपस्थित रह सकता है, लेकिन कहानी में कहानीकार की उपस्थिति अच्छी नहीं मानी जाती। कहानी में घटनाएँ, पात्र और उनके कार्यकलाप - सभी मिलकर संवेदना का ताना-बाना बुनते हैं और जीवन के किसी पहलू का जीवन्त चित्रण करते हैं । इस चित्रण में केवल काल-परिस्थिति के सटीक विवरण ही नहीं होते, उनके औचित्य की प्रतिष्ठा भी होती है। तभी कहानी स्वाभाविक होकर ग्राह्य होती है। इसलिए कहानी-कला को अपेक्षाकृत कठिन कहा गया है।

'भास्कर राव इंजीनियर' में चौदह कहानियों को संगृहीत किया गया है, दूसरा राज महर्षि, भास्कर राव इंजीनियर, देवता, कोचिंग, कौवे, दीपदान, आफरीन, समरसता, चिलिंग सेंटर, स्टेण्ट, सलामी, पुरस्कार, त्याग और मकान। इन कहानियों में जीवन की विविध स्थितियों का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। विषय-वैविध्य की दृष्टि से भी कहानियाँ समृद्ध हैं, यद्यपि अधिकांश छात्र-जीवन की कहानियाँ हैं। यह अवस्था बनने-बिगड़ने की होती है। कहानीकार की दृष्टि साफ़ है कि जब तक ज़िन्दगी की नींव मज़बूत नहीं होगी, उस पर आकांक्षाओं की बुलन्द इमारत नहीं खडी की जा सकती। कुछ कहानियाँ भ्रष्टाचार को उधेड़ती हैं। कुछेक जातिवाद के ज़हर को सामने लाती हैं, तो कुछ खेल की दुनिया को जिनमें प्रेम, त्याग और ठगी का वही चित्रण है, जो हमारे आस-पास की दुनिया में विद्यमान है। 'आफरीन' अलग प्रकार की कहानी है। इसमें एक हिन्दू (ब्राह्मण) युवक मुस्लिम युवती से प्रेम-विवाह करता है, लेकिन बेटे की माँ बहू को

स्वीकारने से मना कर देती है। बाद में कुछ ऐसे परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं कि माँ बहू को स्वीकार कर लेती है। इस कहानी में साम्प्रदायिक सौहार्द का सुन्दर सन्देश दिया गया है। धर्म को लेकर हमारे मन में जो पूर्वाग्रह होते हैं, उन्हें तोड़ने का सफल प्रयास कहानी में चित्रित किया गया है। हालाँकि ऐसी कहानियाँ हमारे आस-पास मिल जाती हैं और कहानीकार ने अपना धर्म भी निभाया है, लेकिन अभी भी ऐसे कथानक पर और कार्य करने की आवश्यकता है ।

कहानी, 'दीपदान' में बच्चों के खेल-खेल में एक बच्ची की आँखों की रौशनी चली जाती है और अपराधी बच्चे को 'बाल सुधार गृह' भी भेज दिया जाता है, लेकिन वह अपने अपराधबोध से उबर नहीं पाता और जब वह बाहर आता है, तो उसे पता चलता है कि उसके कारण जिस बच्ची की रौशनी चली जाती हैं, वह उसके ही एक परिचित की पत्नी है। उसकी आँखों का अँधेरा दूर करने के लिए वह अपनी आँखें उसे दान करता है। इसके लिए उसे मृत्यु का वरण करना पड़ता है। कहानी में स्वाभाविकता तो है ही, उसका अन्त अत्यन्त मार्मिक है। कहानी स्पष्ट रूप से अपना सन्देश छोड़ जाती है।

संग्रह की पहली कहानी, 'दूसरा राज महर्षि' में यह बहुत ही मार्मिकता के साथ चित्रित किया गया है कि किसी होनहार और मेधावी छात्र पर उसके अभिभावक की इच्छा-अपेक्षा का भार कितना असंगत और दुखद हो सकता है! अनुरीता अपने बेटे शौर्य में राज महर्षि की छवि देखती है। राजमहर्षि आई.आई.टी. टॉपर था । पढ़ाई का अधिक दबाव और आई.आई.टी. में अगला टॉपर होने की अनुरीता की लालसा ने शौर्य को तोड़ दिया। वह न केवल परीक्षाओं में पिछड़ता गया बल्कि वह सायकियाट्रिक और न्यूरोलाजिकल डिसआर्डर का शिकार हो बिस्तर पर पड़ गया। कहानी में कहानीकार ने दोनों मुख्य पात्रों का बहुत ही सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। इससे उसके कहानी लेखन-कला का परिचय मिलता है। कथानक का अपेक्षित कथारस के साथ यथोचित विस्तार और उसका स्वाभाविक समापन कहानी को क्लासिक का दर्जा प्रदान करता है।

कहानी, 'भास्कर राव इंजीनियर' एक सच्चे इन्सान की कहानी है जो अपने गाँव में बिजली न होने के कारण दुखी है और वह इंजीनियर बनकर ट्रांसफॉर्मर बनाने की फैक्ट्री लगाना चाहता है ताकि गाँवों में बिजली का संकट दूर हो सके। लेकिन वह अपने करुणा से भरे हृदय के कहने पर ऐसे कार्य करने को विवश हो जाता है कि उसकी इंजीनियरिंग की पढ़ाई समय से पूरी नहीं हो पाती। कथाकार की लेखनी से निकला कथानायक का चित्रण हृदय को छू लेता है।

कहानी, 'देवता' और 'समरसता' जातिवाद और आरक्षण से उपजी अनपेक्षित

स्थितियों की मार्मिक कहानियाँ हैं। 'देवता' में कथा-पात्र तोरन के पुत्र सूरज की नौकरी उसके साहब- निरंजन, लिपिक पद पर लगवा देते हैं और इस कारण वह उन्हें देवता का दर्जा देता है। सूरज होनहार है और वह लिपिक से आगे बढ़ने की क्षमता रखता है, लेकिन अन्य कथा-पात्र निरंजन उसे जानबूझकर लिपिक से आगे नहीं बढ़ने देना चाहता, क्योंकि उसे डर है कि यदि तोरन जैसे लोगों के बच्चे भी अफसर बन जाएंगे तो उसके बेटे चिंकू का क्या होगा। निरंजन कहता है, ''अफसर का बेटा होकर क्या बाबू बनकर धक्के खाने के लिए छोड दूं उसे- किसी तरह चिंकू अफसर बन भी गया तो कौन मिलेगा उसके घर पर काम करने के लिए- मैने सूरज को लेकर जो भी किया बहुत सोच समझ कर किया- वह बाबू बनकर खुश है- और तोरन भी! 'कहानी का अन्त मार्मिक और प्रतीकात्मक है' हवा के झोंके से राधा-कृष्ण की मूर्ति गिरकर टूट गई थी। तोरन टुकड़ों को समेटते हुए अपनी झोली में रख रहा था।''

'समरसता' की विषयवस्तु भी जाति-आधारित है। लेकिन कथाकार ने इस विषय का एक बिलकुल अछूता पहलू उठाया है। कुछ जातियाँ किसी प्रदेश विशेष में सवर्ण हैं, तो कहीं आरक्षित। एक ही रिश्ते के परिवार में एक बेटी का पी.एम.टी. में सेलेक्शन 84 परसेंट मार्क्स लाने के बाद भी नहीं होता, जबकि सरकार द्वारा निर्धारित कोटे के अन्तर्गत आने वाले उसी जाति के एक लड़के का सेलेक्शन अन्यत्र मात्र 28 प्रतिशत अंक पाकर हो जाता है । ऐसे अन्याय के विरुद्ध कथाकार का आक्रोश फूट पड़ता है: ''आखिर सरकार की यह कैसी व्यवस्था है- जातियों का यह कैसा बँटवारा है कि एक ही समाज के लोग उसकी नजर में अलग-अलग श्रेणी के हैं। वैसे भी जाति-पाँति और ऊँच-नीच के खानों में बँटी व्यवस्था के बावजूद सरकार ने एक ही जाति के लोगों के बीच भी यह कैसी खाई बना दी है- जहाँ भाईचारे की जगह वैमनस्यता पनप रही है । एक ही परिवार के लोग ईर्ष्या की भट्टी में धधक रहे हैं- मानसिक यंत्रणा से गुजरने को मजबूर हैं। जातियों के इस अभागे भँवरजाल ने प्रेम और सुकून से आगे बढ़ रहे रिश्तों में सेंधमारी कर दी है- उन्हें नश्तर की नोंक पर बैठा दिया है। क्या कोई शादी-व्याह भी यह पता कर करता है कि उसकी जाति कहीं उस जिले में आरक्षित वर्ग में तो नहीं आती।''

कहानी, 'कौवे' अंधविश्वास पर प्रहार करती कहानी है। कार्तिक बंगलौर में नौकरी करता है। उसे सूचना मिलती है कि गाँव में उसके चचेरे भाई की मृत्यु हो गयी है। वह बेचौन हो उठता है और गाँव के लिए निकल पड़ता है। लम्बी दूरी तय करने के बाद जब वह गाँव पहुँचता है, तो पता चलता है कि भाई की मृत्यु की बात झूठी है। कहानी कार्तिक की मनोदशा और उसके व्यथित हृदय के तार छेड़ती है कि कैसे उसने अपने चचेरे

भाई के साथ समय बिताया था और वह उससे कितना प्यार करता था। रास्ते में वह चाय तक नहीं पीना चाहता था। कैसे उसकी पत्नी ने उसे सहारा दिया! लेकिन कहानी का अन्त विस्मित कर देने वाला है। यह अवश्य है की कहानी ख़त्म करते-करते पाठक के चेहरे पर मुस्कान आ जाती है।

'कोचिंग' कहानी वाजिब सवाल उठाती है, "पेरेंट्स भी अपने बच्चों का मन क्यों नहीं समझ पाते और उन्हें अपने से दूर इस कोलाहल में छोड़ जाते हैं भटकने के लिए!" लेकिन सचाई मात्र इतनी नहीं है, बिना कोचिंग के किसी टेस्ट की तैयारी कैसे हो सकती है? कहानी देवांग नामक पढ़ाई से भटके हुए एक ऐसे लड़के के बारे में ऐसी बातें बताती है कि पाठक उन्हें पढ़कर दंग रह जाता है। अन्य कथानायक बच्चे कोचिंग से लाभ उठाकर आई.आई.टी. में चुने जाते हैं। कथाकार उनमें से एक पात्र के माध्यम से कहानी का सार पाठकों के सामने रखता हैः "कुछ बनने के सफर में कितना कुछ छूट जाता है पीछे- ना वह परिवार की खुशियों में सम्मिलित हो सका और ना दुख के क्षणों में वह परिवार का साथ दे सका। समय चलता है तो चीजों भी पीछे छूटती चलती हैं- उसने बहुत कुछ खोया है पर दूसरे नजरिये से देखें तो जिंदगी के सही मायने भी सीखे हैं - हार ना मानने के, हर हाल में होंसला कायम रखने के, टूटने के क्षणों में स्वयं को सहेज कर रखने के-- और सबसे बड़ी बात अपने लिए सही मित्र चुनने के-- उसे चित्रा ना मिली होती तो नंदन मेहरा उसका मानसिक शोषण करता रहता या फिर वह भी जतिन मिश्रा या भुवन काले की प्रतिकृति बन जाता या कोई खत्री अंकल उसे देवांग बना सकते थे-- सब कहते ही है यह उम्र होती ही है बहकने की-- कोचिंग में तो केवल विषय सिद्धि ही सिखाई जाती है असली कोचिंग तो जिंदगी का सार समझने की है जिसे कोई सिखाता नहीं है स्वयं सीखना होता है।"

कहानी, 'चिलिंग सेंटर' में कहानीकार एक डेरी में किस प्रकार धांधली होती है और भ्रष्टाचार की जड़ें कितनी गहरी हैं, इसका जीवंत चित्रण करता है। डेरी में भ्रष्टाचार के तरीके चौंका देने वाले हैं। उन पर लगाम लगाने वाले इंजीनियर की कहानी में कथानायक अंततः भ्रष्टाचारी ताकतों के आगे टिक नहीं पाता। फिर भी कहानी में कथानायक की विवशता के विवरण पाठक को द्रवित करने वाले हैं। भ्रष्टाचार जी जड़ें इतनी गहरी हैं कि कथानायक स्वयं ऐसे चक्रव्यूह में फँस जाता है जहाँ उसे समझौता करने के अलावा कुछ भी नहीं सूझता। आज की व्यवस्था की यही कड़वी सचाई है; हम बातें भले ही कितनी कर लें! जब स्वयं की नौकरी पर बन आती है, तब सारे आदर्श खोखले ही नज़र आते हैं और हम समझौता करने को विवश हो जाते हैं। कहानी का प्रतीकात्मक

अन्त भुलाये नहीं भूलताः ''वह दूर खड़ा क्षितिज में धीरे-धीरे सूरज को ऊपर की ओर चढ़ते देख रहा था- पर अन्दर एक सूरज डूब रहा था।''

'स्टेण्ट' कहानी चिकित्सा के क्षेत्र में फैली ठगी को तफ़सील से बयान करती है। एक मरीज की एन्ज्योप्लास्टी कर लाखों का बिल उगाह लिया जाता है, जबकि उसे दिल की बीमारी थी ही नहीं। जिस नर्सिंग होम में उसका इलाज हुआ था, उस पर स्वास्थ्य विभाग और विजिलेंस टीम का छापा पड़ा और यह जानकारी में आया कि पिछले कई महीनों में एंजियोप्लास्टी कराने वाले मरीजों की संख्या में आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हुई थी। जाँच के दौरान स्टॉक में नकली दवाइयाँ और एक्सपायरी डेट के 'स्टेण्ट' (हृदय रोग में इस्तेमाल होने वाला यन्त्र) पाये गये थे। जाँच और कार्यवाई का समाचार एक सांध्य दैनिक में छपा था। कहानी का दुखद पहलू यह है कि जिस मरीज को 'स्टेण्ट' लगा था, उसकी मृत्यु इस समाचार को पढ़ सदमे से हो गयी।

संग्रह की 'सलामी' कहानी एकदम अलग प्रकार की है। एशिया में पहलवानी का चाँदी का पदक जीतने वाला जगवा पहलवान गुमनामी का जीवन जीता है। वह एक और पहलवान जमुना के पोते- इशुरी को पहलवानी सिखाने हेतु खोमचा लगाकर धन इकठ्ठा करता है, जबकि पिछले चार-पाँच सालों से एक क्रिकेटर सुनील उसे प्रतिमाह ढाई हज़ार रुपये प्रति माह भेजता है, जिन्हें वह लौटाता तो नहीं है, पर अपने खर्च में भी नहीं लेता। जगवा की मृत्यु पर जब उसके घर से एक बक्शा मिला जिसमें तीन लाख पचहत्तर रुपयों के अतिरिक्त एक बड़ा लिफाफा मिला जिसमें पुराने अखबारों की कतरनों से पता चला कि वह क्या था! कलेवर की दृष्टि से कहानी यद्यपि बहुत छोटी है, जैसे कोई लघुकथा हो, फिर भी वह अपने कहानीपन में किसी अन्य कहानी से कम नहीं है। कहानी के अन्त में कथाकार ने जो दृश्य उत्पन्न किया है, वह मर्मस्पर्शी और अविस्मरणीय हैः ''सुनील भैया जी.. हम आपके भेजे रुपए नहीं ले सकत.. हमारा ज़मीर इसकी इजाज़त नहीं दे रहा.. हम जैसे अनपढ़ और ज़ाहिल को देश की सेवा करने का मौक़ा मिला यही हमारे लिए बहुत सौभाग्य की बात है.. हम इस सेवा का मूल्य नहीं ले सकत.. आपके पैसे हमरे पास सुरक्षित हैं.. जैसे ही हमें कोई सही आदमी मिलेगा हम वो पैसा आप तक वापस भेज देंगे- आपका जगवा।''

खेल की ही दुनिया की कहानी, 'पुरस्कार' में कोच का नाम बदल कर पुरस्कार की राशि हड़प ली जाती है। पूरे घटनाक्रम में एक शिष्या जिसे इक्कीस लाख रुपये का तथा उसके कोच को पाँच लाख का नक़द पुरस्कार मिलने वाला होता है, की मिलीभगत है। वह असली कोच के बदले अपने रिश्तेदार को कोच बताकर पुरस्कार हड़प लेती है

और असली कोच ठगा रह जाता है। यह कहानी भी छोटे कलेवर की है, लेकिन कथावस्तु को बहुत ही अच्छे ढंग से प्रस्तुत करती है। इसी क्रम में संग्रह की अन्तिम कहानी हैः 'त्याग'। इस कहानी में कथानायिका अपने प्रेमी, जो किसी अन्य इवेंट में प्रतिभागी था, के उत्साहवर्धन हेतु अपनी स्पर्धा में भाग नहीं लेती। त्याग प्रेम का अप्रतिम बलिदान का संसूचक रहा हैं कथाकार ने इसे बखूबी शब्दायित किया है।

कुल मिलकर, प्रस्तुत कहानी-संग्रह सामजिक नवनिर्माण को लक्षित है। समाज की स्वस्थ संरचना में युवकों की अद्वितीय भूमिका है। इस दृष्टि से कथाकार ने अनेकानेक कहानियों में छात्रों-नवयुवकों को अपने उत्तरदायित्व का भान कराया है। ये कहानियाँ जहाँ हमारे सामने जीवन का प्रमाणिक दस्तावेज़ प्रस्तुत करती हैं, हमें ज़िन्दगी को देखने-समझने के दृष्टिकोण प्रदान करती हैं; वहीं, हमारे हृदय में सद्भाव जगाती हैं और मस्तिष्क को झकझोरती हैं । आशा है कि अरुण अर्णव खरे की इन विविधवर्णी कहानियों का हिन्दी साहित्य जगत में भरपूर स्वागत होगा ।

- राजेन्द्र वर्मा

3/29 विकास नगर, लखनऊ-226 022

अनुक्रम

1 दूसरा राज महर्षि

2 भास्कर राव इंजीनियर

3 देवता

4 कौवे

5 कोचिंग

6 दीपदान

7 आफरीन

8 समरसता

9 चीलिंग सेंटर

10 स्टेण्ट

11 सलामी

12 पुरस्कार

13 त्याग

14 मकान

दूसरा राज महर्षि

शहर के लगभग सभी मुख्य चौराहों पर लगे राज महर्षि के बड़े-बड़े होर्डिंग्स को जब भी अनुरीता देखती उसके मन मे एक ही ख़्याल आता कि कब उसका बेटा बड़ा होगा और वह उसकी तस्वीर इन होर्डिंग्स पर चमकते हुए देखेगी। राज महर्षि उस वर्ष का आई.आई.टी. टॉपर था। पहली बार शहर के किसी लड़के ने इतनी बड़ी सफलता हासिल की थी। अनुरीता का बेटा शौर्य तब छोटा ही था और नौवीं में पढ़ रहा था। पढ़ने में वह भी बहुत होशियार था और अब तक किसी भी इम्तिहान में दूसरे नम्बर पर नहीं आया था। इसी कारण अनुरीता बड़े-बड़े सपने देखने लगी थी। उसने अपने मन की बात को शौर्य से छुपाना भी उचित नहीं समझा। वह सोचती थी कि शौर्य को अभी से प्रेरित करने के लिए जरूरी है उससे अपने मन की बात कह दी जाए ताकि उसे पता रहे कि उसकी मंजिल क्या है। एक दिन जब दोनों न्यू मार्केट से ऑटो में लौट रहे थे तो अनुरीता ने सेकेण्ड स्टेप पर लगे होर्डिंग की ओर इशारा करते हुए कहा- 'शौर्य -- उधर देखो -- एक दिन मैं भी तुझे वहीं पर देखना चाहती हूँ -- आज से तू दूसरा राज महर्षि--'

'माँ मेरा नाम शौर्य है' अनुरीता का बेटा तुनक गया।

''हाँ बेटा -- तू शौर्य ही है, और होर्डिंग पर भी तेरा नाम ही लिखा होगा -- कुछ इस तरह से -- शहर का दूसरा राज महर्षि -- शौर्य आनंद'' यह कहते हुए अनुरीता की आँखों में सौ केंडिल पॉवर की चमक उभर आई, पर शौर्य के चेहरे से लग रहा था कि माँ का बार-बार उसे राज महर्षि कहना पसन्द नहीं आया था।

समय अपनी चाल चलता रहा। शौर्य ने नौवीं मे भी टॉप किया। दसवीं के बोर्ड एग्जाम में उसे पूरे राज्य में तीसरा स्थान मिला। गणित में उसे पूरे सौ मार्क्स मिले थे। अनुरीता ने मानो दुनिया ही जीत ली। वह आसमान में उड़ते हुए इतनी ऊँचाई तक

पहुँच गई थी कि उसे इन्द्रधनुष भी अपने पैरों के नीचे दिखाई देने लगा। उसे पूरा विश्वास हो चला था कि शौर्य की तस्वीर एक दिन होर्डिंग्स पर ज़रूर जगमगाएगी। उसे जब भी मौक़ा मिलता वह शौर्य को राज महर्षि की याद दिलाना नहीं भूलती। अपनी खुशी और सपने को बाँध पाना उसके लिए मुश्किल होता जा रहा था। जाने अनजाने उसने कितने ही लोगों को इस बारे में बता दिया था। कुछ लोगों ने तो उसकी बातों पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया तो कुछ ने उसे - ''हाँ -- हाँ -- क्यूँ नहीं -- शौर्य तो बहुत होशियार लड़का है -- वह ज़रूर टॉप करेगा'' जैसी बातें कर अनुरीता का उत्साह बनाए रखा। कुछ ने मन ही मन उसपर व्यंग्य बाण भी चलाए- ''बहुत उड़ रही है अभी से -- देखना एक दिन मुँह दिखाने से भी कतराएगी--''

अनुरीता की बेसब्री दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। ये समय इतना धीरे-धीरे क्यूँ चल रहा है। शौर्य तो अभी ग्यारहवीं मे ही पढ़ रहा है। दो साल और इंतजार करना है उसे अभी तो -- चौराहों पर लगे राज महर्षि के पोस्टर भी धुँधलाने लगे थे पर अनुरीता के मन में अंकित राज की छवि अब भी वैसी दमक रही थी -- जैसी कोचिंग सेंटर के ऊपर लगे निओन लाइट वाले होर्डिंग में दमका करती थी।

उस दिन शौर्य अनुरीता पर बड़ा नाराज़ हुआ जब उसने सरिता और रश्मि आण्टी से माँ को कहते सुन लिया था- 'मैं बहुत बेसब्री से उस दिन का इन्तजार कर रही हूँ जब मेरा शौर्य दूसरा राज महर्षि बनकर इस शहर की हर गली में चर्चा का केन्द्र बनेगा।' सरिता तिवारी और रश्मि सिन्हा अनुरीता की पक्की सहेलियाँ थी और उस दिन मधु सुगवेकर की किटी-पार्टी से लौटते हुए घर पर रुक गईं थीं।

'अनुरीता -- हम सबकी इच्छा है शौर्य ऐसी सफलता प्राप्त करे -- पर उस पर इसके लिए अभी से दबाव बनाना ठीक नहीं है' - रश्मि ऑण्टी ने कहा था।

'रश्मि -- मैं नहीं मानती तुम्हारी बात को -- शौर्य को पता होना चाहिए कि उसका लक्ष्य क्या है -- हम क्या सोचते हैं -- हमारे सपने क्या हैं- हमारी अपेक्षाएँ क्या हैं-- यदि उसे अभी से सचेत नहीं करेंगे तो फिर वह कैसे अपने उद्देश्य को समझेगा और प्राप्त करेगा' - अनुरीता के हाव-भाव से लग रहा था कि उसे रश्मि की बात पसन्द नहीं आई है।

'तुम तो बुरा मान गई अनुरीता -- मेरा मतलब ये नहीं था।।' रश्मि ने कहा- 'मैं तो केवल इतना कहना चाह रही थी -- कि शौर्य पर राज महर्षि बनने का एक्स्ट्रा प्रेसर न बनाया जाए -- उससे अपेक्षा रखो लेकिन अपेक्षाओं का बोझ उस पर मत लादो।।'

रश्मि और सरिता के जाने के बाद चाय के प्याले उठाते हुए अनुरीता बड़बड़ाती जा रही थी- 'मुझे सीख दे रहीं हैं- मेरे बेटे से जलती हैं दोनों - रश्मि ने तो अपने बेटे को कॉमर्स दिलाया है- मैथ्स लेकर पढ़ पाना हरेक के बस की बात नहीं है- सरिता की बेटी तो और आगे जा रही है- उसे फाईन आर्टस से बेहतर कोई और विषय ही नहीं मिला- दिनभर कागजों पर रंग उड़ेलती रहती है -- कैसी विचित्र-विचित्र आकृतियाँ बनाती है-- उफ।'

'माँ मैं शिखर के यहाँ जा रहा हूँ- बहुत दिनों से टेबल टेनिस नहीं खेला है- एक घण्टे में लौटूँगा'- कहते हुए शौर्य ने अपनी साइकिल बाहर निकाली और चला गया।

कुछ दिनों बाद शौर्य की बर्थ डे पार्टी में आए उसके दोस्तों- अनुज, मनीष और सौम्या से भी अनुरीता ने वही सब कह डाला, जो अनेक बार वह अपनी सहेलियों से कह चुकी थी - 'देखना तुम लोग -- शौर्य राज महर्षि का रिकॉर्ड भी एक दिन तोड़ कर दिखाएगा -- सारे शहर में उसके पोस्टर्स लगे होंगे--।' उस समय तो उन्होंने - 'हाँ ऑण्टी -- आप सच कह रही हैं -- सर को भी शौर्य पर पूरा भरोसा है' कहकर अनुरीता के मन की बात कर दी पर बाद में वे भी शौर्य को राज -- राज कह कर बुलाने लगे। सुन कर शौर्य तिलमिला कर रह जाता। माँ पर उसे गुस्सा भी बहुत आता -- पर उसे पता था कि माँ से कहने का कोई फ़ायदा नहीं है। पापा की पोस्टिंग भुवनेश्वर में हो जाने के कारण वह दो माह में बमुश्किल चार-पाँच दिनों के लिये घर आ पाते थे। शौर्य से उनकी ज्यादा बात नहीं हो पाती थी-- 'पढ़ाई कैसी चल रही है -- अपना व माँ का ठीक से ध्यान रखना-- उनको परेशान मत करना -- कोचिंग मिस मत करना -- सात बजे तक घर आ जाया करो --' जैसे संवाद ही दोनों के मध्य होते थे।

शौर्य को भी राज महर्षि अब चुनौती लगने लगा था। जब भी वह रिलेक्स मूड में होता, बरबस ही राज महर्षि के बारे में सोचने लगता -- यदि वह सचमुच राज महर्षि नहीं बन पाया तो -- माँ तो टूट ही जाएगी -- कितना अपमानित महसूस करेगी वह -- सरिता और रश्मि ऑण्टी कितने चटकारे ले-ले कर माँ की हँसी उड़ाएँगी। मेरे दोस्त भी मन ही मन बहुत खुश होंगे -- मनीष तो ख़ासतौर पर- जिसने मेरा मज़ाक़ बनाने के उद्देश्य से पहली बार मुझे स्कूल में पीछे से 'ओए राज' कह कर पुकारा था और खिलखिलाकर उपेक्षापूर्ण ढंग से हँस दिया था। इसके बाद तो उसके क्लासमेट्स उसे इसी नाम से बुलाने लगे थे। कितना असहज हो जाता है वह यह नाम सुनकर --

शौर्य का अस्तित्व ही नहीं बचा हो जैसे।

इसी मानसिक उधेड़-बुन मे डूबता उतराता शौर्य अपने को बहुत अकेला महसूस करने लगा था। पढ़ने बैठता तो किताबों के बीच से निकल कर राज महर्षि उसके सामने खड़ा हो जाता। कभी उसे लगता राज महर्षि पढ़ाई में उसकी मदद कर रहा है -- कठिन से कठिन सवाल वह चुटकी में हल कर लेता -- तो कभी उसे इसके उलट महसूस होने लगता- जब आसान से सवाल भी उसे उलझा कर रख देते -- उसे लगता राज महर्षि दूर खड़ा-खड़ा उस पर हँस रहा है। वह राज महर्षि नाम की इस पहेली से जितना दूर रहना चाहता था वह उतना ही निकट आकर उसे अपनी गिरफ्त में ले लेती।

शौर्य ने स्वयं को स्कूल और कोचिंग तक ही सीमित कर लिया था। घर आने के बाद वह अपने को कमरे में बन्द कर लेता और पढ़ने के लिए बैठ जाता। दो महीने से ऊपर हो गए थे वह न शाम को और न ही छुट्टी वाले दिनों में किसी दोस्त से मिलने गया था -- टेबल टेनिस खेलने का उसका शौक़ तो बहुत पीछे छूट गया था। टीवी देखे हुये भी उसे एक अर्सा हो गया था- उसे ना ही लॉफ्टर शो से दिलचस्पी रह गई थी और ना ही तारक मेहता का उल्टा चश्मा आकर्षित करता था। मोबाइल में भी उसने पिछले एक माह में एक बार भी नेट-पेक नहीं डलवाया था। अनुरीता बहुत खुश थी कि शौर्य उसके सपने के लिए कितनी जी तोड़ मेहनत कर रहा है। पढ़ाई में इतना खोया रहता है कि खाने के लिए नख़रे करना भी भूल गया है।। लौकी और गिल्की की सब्ज़ियाँ तक चुपचाप खा लेता है। अनुरीता उसकी सेहत को लेकर चिन्तित भी रहती। उसे बीच बीच में उसकी मन पसन्द चीज़ें बनाकर खिलाती रहती पर अनुरीता के मन में यह कभी नहीं आया कि वह शौर्य को कभी-कभी बाहर घूमने, दोस्तों से मिलने या थोड़ा बहुत खेलने के लिए कहे।

ग्यारहवीं की स्थानीय परीक्षा में शौर्य पहले स्थान से खिसक कर तीसरे स्थान पर आ गया। हमेशा खेल-कूद में मस्त रहने वाले तन्मय चतुर्वेदी ने आश्चर्यजनक रूप से सातवें स्थान से छलांग लगाते हुए टॉप किया था और सौम्या हमेशा की तरह दूसरे स्थान पर ही थी। शौर्य को पता था कि उसके पेपर्स उतने अच्छे नहीं गये हैं- हर पेपर में समयाभाव के कारण वह 5 से 10 अंकों के प्रश्न हल ही नहीं कर पाया था। पर अनुरीता शौर्य के रिजल्ट से ज्यादा विचलित नहीं थी- उसे लगता था कि आई.आई.टी. की तैयारी में अधिक ध्यान देने के कारण ही शौर्य पहले स्थान पर नहीं आ सका है।

रिजल्ट से शौर्य खुश नहीं था। जीवन में पहली बार वह प्रथम आने से वंचित रहा था -- और वह भी सीधे तीसरे नम्बर पर जा पहुँचा था। तन्मय जिसे कभी कोई बहुत सीरियस्ली नहीं लेता था सीधा टॉप कर गया था। शौर्य को लगने लगा था कि उसके साथ सब कुछ ठीक नहीं है। उसकी याददास्त उसका साथ नहीं दे रही है -- कई बार आसान से फार्मूले तक उसे समय पर याद नहीं आते और छोटे-छोटे सवालों को हल करने में भी उसे अधिक समय लग जाता है। वह किताबों में और ज्यादा दिमाग खपाने लगा -- हर समय उसे लगता रहता कि राज महर्षि उसके आसपास रहकर उसकी हर गतिविधि पर नजर रखे हुए है -- कई बार तो वह देर रात तक कुर्सी पर बैठा इसी उधेड़बुन में खोया रहता कि कहीं राज महर्षि उसकी राह कठिन बनाने कोई खेल तो नहीं खेल रहा -- फिर उसे दूसरे ही क्षण अपने पागलपन पर हँसने की इच्छा होती -- लेकिन उसकी हँसी तो जैसे बहुत पीछे कहीं छूट चुकी थी। अधरों पर आने से पहले ही हँसी अन्दर ही अन्दर घुटकर दम तोड़ देती।

समय जैसे-जैसे बीत रहा था शौर्य का आन्तरिक डर बढ़ता जा रहा था- उसे अपनी असफलता का डर बुरी तरह सताने लगा था- किताबें खोलते ही अक्षरों के स्थान पर उसे अब राज महर्षि के साथ-साथ रश्मि और सरिता ऑण्टी के चेहरे भी दिखाई देने लगे थे -- उसे लगता ये सभी उसकी असफलता का जशन मनाने इकट्ठे हो गये हैं। मनीष भी दूर से उसे कितनी अजीब और मजाक बनाने वाली निगाहों से देख रहा है -- वह कितना खुश लग रहा है -- लगता है उसे अपने फेल हो जाने का उतना दुख नहीं पहुँचा है जितना उसके असफल हो जाने से उसे खुशी मिली है। इन सबके बीच माँ का उदास पीला चेहरा देखकर उसका मन उसे धिक्कारने लगता -- उसका मन होता कि तकिए में मुँह छुपाकर रो ले -- पापा प्रकट होकर जरूर उसे ढाढ़स बँधाते -- अभी राह खत्म थोड़े हुई है -- अगले साल और तैयारी से परीक्षा देना -- अमिताभ बच्चन की वह सीख भी उसके मन-मष्तिस्क पर उभरती, जो उन्होंने टी.वी. पर किसी कार्यक्रम में दी थी -- सम्भवतया कौन बनेगा करोड़पति में -- 'कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती / लहरों से डरकर नौका पार नहीं होती।'

12वीं के इम्तहान सिर पर थे लेकिन शौर्य इम्तहान देने के लिए स्वयं को तैयार नहीं कर पाया था। आधे से ज्यादा कोर्स का वह रिवीजन ही नहीं कर सका। कई दिनों से उसके सिर में दर्द हो रहा था -- नींद भी उसकी पूरी नहीं हो रही थी -- साथ ही राज महर्षि कभी भी अचानक आकर उसका रहा सहा आत्म विश्वास हिलाकर चला जाता था।

पहला पेपर देकर वह वापस आ रहा था कि रास्ते में सायकिल से गिर गया। गिरते ही वह बेसुध हो गया। उसके दोस्तों ने उसे अस्पताल पहुँचाया और अनुरीता को खबर दी। उसका हीमोग्लोबिन गिरकर नौ रह गया था -- वजन भी 51किलो से घट कर 44 किलो रह गया था। अनवरत मानसिक तनाव की काली रेखाओं ने उसके चेहरे को मलीन बना दिया था। वह बिस्तर से उठ भी नहीं पा रहा था। अनुरीता इस स्थिति में अपने बेटे को देखकर सिहर गई, यदि सिस्टर ने उसे संभाला नहीं होता तो वह नीचे गिर गई होती। डॉक्टर ने शौर्य को कम से कम एक सप्ताह अस्पताल में रखने को कहा -- उसे नींद पूरी ना होने की वजह से सायकियाट्रिक एण्ड न्यूरोलॉजिकल डिस ऑर्डर हुआ था -- अनुरीता तो जैसे यह सुनकर निढाल हो गई, उसे लगा किसी उपग्रह ने उसे अंतरिक्ष में ले जाकर छोड़ दिया है -- राज महर्षि के होर्डिंग के टुकड़े भी उसके साथ-साथ शून्य में घूम रहे हैं।

--- --- ---

भास्कर राव इंजीनियर

एस.जी. भास्कर राव को इतना भावुक किसी ने कभी नहीं देखा था- उनकी आँखों से झरझर आँसू बह रहे थे। ओल्ड हॉस्टल के अधिकतर छात्र उनके कमरे के सामने एकत्र हो चुके थे और इस दृष्य को देख-देख कर खुद भी भावुक हुए जा रहे थे। उन्होंने सबको पहले ही बता रखा था कि इसके बाद वह अब दोबारा पेपर देने नहीं आएंगे, इस मर्तबा अन्तिम बार पेपर देने आए हैं। उस दिन शाम को ही उनका गुण्टूर वापसी का रिजर्वेशन था। उनका सामान पेक हो चुका था। बाबूलाल कमरे में एक ओर खड़ा रो रहा था। वह पिछले कई सालों से हॉस्टल का चौकीदार था और फुर्सत के समय भास्कर राव की सेवा करता रहता था ।

भास्कर राव ने एस.आई.टी. टेक्नोलॉजिकल इंस्टीट्यूट में उस समय प्रवेश लिया था जब कॉलेज नया-नया खुला था। तब इंजीनियरिंग कॉलेज में आज सरीखी ब्रांचेज की भरमार नहीं थी- केवल तीन कोर ब्रांचेज-सिविल, मेकेनिकल और इलेक्ट्रिकल की ही पढ़ाई हुआ करती थी। भास्कर राव गुण्टूर से यहाँ इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग पढ़ने आए थे। उनका सपना था इलेक्ट्रीकल इंजीनियर बनकर ट्रांसफॉर्मर बनाने की एक फैक्टरी लगाने का। जब भी वह अपने गाँव जाते और वहाँ बिजली न होने की वजह से लोगों की परेशानियों को देखते तो उनका मन वेदना से भर जाता -- आजादी के तीस वर्षों बाद भी उनके गाँव में रोशनी नहीं पहुँच पाई थी -- बिजली विभाग का जूनियर इंजीनियर हमेशा ट्रांसफॉर्मर ना होने का रोना रोता था। बिजली ना होने के कारण गाँव में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तक नहीं खुल पाया था और ना ही प्रायमरी स्कूल। बारिस के समय अँधेरे में डूबी गलियों में चलने को अभिशप्त गाँव वाले हर साल तीन-चार लोगो को सर्प-दंश से असमय ही काल के गाल में समाते हुए देखते थे। गाँव से चार मील की दूरी पर ही नागालेरू नदी थी लेकिन बिजली के अभाव में गाँव के खेत प्यासे थे - नदी का पानी खेतों तक पहुँचाने के लिए कोई साधन नहीं था।

गर्मियों में पीने के पानी का भी अभाव हो जाता था -- नल-जल योजना के बारे में सोचना भी गाँव वालों के लिए स्वप्नवत था। उनके गाँव जैसे ही आस-पास के बहुत से गाँव इसी तरह अँधेरे में डूबे सिसकियां लेते हुए जी रहे थे।

अँधेरे में डूबे गाँवों में रोशनी पहुँचाने का -- उनका सपना अब तक अधूरा ही था। पूरे ग्यारह वर्षों के अथक प्रयास के बाद भी वह फुल-फ्लेश इंजीनियर बनने में सफल नहीं हुए थे- वह इंजीनियर बनने का सपना त्याग चुके थे और अपने पैतृक तम्बाखू-उत्पादन के बिजनेस में रम चुके थे। उनका विवाह भी हो चुका था और एक नन्हा-मुन्ना भी उनके जीवन में आ चुका था। पर गाँव का अँधेरा अब भी उनके मन में कभी-कभी कराहता रहता था और वह बेचैनी अनुभव करने लगते। इसी व्यग्रता में वह इंजीनियर बनने का मोह त्याग नहीं पाए थे और इम्तहान देने पहुँच जाते थे।

ओल्ड हॉस्टल का कमरा नम्बर सात भास्कर राव की पहिचान था। 1977 में जब उन्होंने कॉलेज में एडमीशन लिया था तबसे वह उसी कमरे में रहते आए थे, कभी दूसरे कमरे में शिफ्ट नहीं हुए। अनेक शुभचिंतको ने कमरे को उनके लिए अशुभ तक कहा पर उन्होंने कभी इस बात पर विश्वास नहीं किया -- वह हँस कर बात टाल देते कि सात मई को तो उनका जन्म हुआ है फिर सात नम्बर अशुभ कैसे हो सकता है। 1983 में वह कॉलेज के नियमित छात्र नहीं रहे थे लेकिन जब भी वह परीक्षा देने आते वह उसी कमरे में ही रुकते थे। उनके आने की बात सुनकर ही उस कमरे में रहने वाले लड़के किसी दूसरे कमरे में अपने साथियों के साथ शिफ्ट हो जाते थे। यह उनका दबदबा या डर नहीं था अपितु उनके प्रति अगाध आदर और श्रद्धा का परिणाम था। हॉस्टल के वार्डन ने भी कभी इस बात पर आपत्ति नहीं की थी । 1983 में अशोक त्रिवेदी उनका रूममेट हुआ करता था वह भी 1986 में पास हो गया था। उसके बाद विनोद गुरु को वह रूम एलाट हो गया था लेकिन भास्कर राव के लिए वह भी सहर्ष रूम छोड़ कर मनोज गोयल के साथ रहने चला जाता था। वर्तमान में सचिन माथुर और देवेन्द्र पंचोली वह रूम शेयर कर रहे थे। भास्कर राव के आने की खबर सुन कर वे दोनों भी अपने दोस्तों के पास शिफ्ट हो गए थे।

भास्कर राव बहुत ही खुशमिजाज, हरेक का ख्याल रखने वाले, सहृदय और सम्वेदनशील व्यक्ति थे। उनके बारे में कितनी ही बातें और किस्से हॉस्टल में रहने वाले सुनते-सुनाते रहते थे। नए लड़कों के लिए जहाँ वह कोतुहल की वस्तु होते थे वहीं परिचितों के लिए उनका आगमन आह्लाद से भरपूर होता था। जीवन सूर्यवंशी तो उन्हें देवतुल्य मानता था। ट्रेन से उतरते समय जब उसकी टाँग कट गई थी और अत्यधिक

खून बह जाने से उसके जीवन पर संकट आ गया था तब भास्कर राव अपना इंस्ट्रूमेण्टेशन का पेपर छोड़ कर उसे खून देने अस्पताल दौड़े आए थे। जिसने भी जीवन से यह कहानी सुनी उसके मन में स्वमेव ही भास्कर राव ने अपना स्थान बना लिया।

पिछले तीन वर्षों से रमेश केसरवानी की कॉलेज फीस और हॉस्टल का खर्च वही वहन कर रहे थे। उसके पिता का आकस्मित निधन हो जाने से उसके परिवार में कोई भी कमानेवाला नहीं था। वह पढ़ाई छोड़ कर शिक्षाकर्मी बन गया था- उस साल जब भास्कर राव परीक्षा देने आए और उन्हें रमेश के बारे में पता चला तो वह ना केवल रमेश से मिलने उसके गाँव तक गए अपितु उससे अपनी इंजीनियरिंग की पढ़ाई पूरी करने का संकल्प भी कराया। रमेश भी अपने संकल्प के प्रति दृढ़ निकला और हर सेमेस्टर में यूनिवर्सिटी में प्रथम तीन मेरिट होल्डर्स में आ रहा है। शहरयार खान के भाई मुबीन को भास्कर राव ने ही हैदराबाद बेडमिण्टन अकादमी में एडमीशन दिलाया था। वह देश का सबसे प्रतिभाशाली खिलाड़ी था। उसने राज्य बेडमिण्टन स्पर्द्धा का जूनियर खिताब भी जीता था किंतु सब्जी का ठेला लगाने वाले पिता के पास उसे अच्छी कोचिंग दिलाने के लिए पैसे ही नहीं थे।

ऐसे कितने ही किस्से थे जो भास्कर राव के साथ जुड़े थे। भास्कर राव जब भी पेपर देने आते और हॉस्टल में रुकते -- वह सभी के लिए कुछ ना कुछ लेकर जरूर आते। दिनकर को उन्होंने माउथ ऑर्गन लाकर दिया था तो रविन्द्र को गिटार। विनीत को टेनिस का रैकेट दिलाया था -- मनोहर को फाइन आर्टस के कम्पटीशन में भाग लेने के लिए शिमला भेजा था। इस समय होस्टल में सभी लड़के उनसे बहुत जूनियर थे। राम उपाध्याय तो उस समय नर्सरी में था जब भास्कर राव इस कालेज में पढ़ने आए थे। यही कारण था कि हॉस्टल का हर लड़का उनमे अपने गार्जीयन का अक्श देखता था। वह जितने दिन हॉस्टल में रुकते वहाँ का माहौल ही अलग रहता। सब बड़े अनुशासित नजर आते और ध्यान रखते कि उनके कारण भास्कर राव को जरा भी तकलीफ न हो।

भास्कर राव ने आने से पहले ही सचिन माथुर को बता दिया था कि इस बार वह आखिरी बार परीक्षा देने आये हैं -- इसके बाद वह दोबारा इंजीनियर बनने की कोशिश नहीं करेंगे और अपने पूर्वजों का बिजनेस पूरे मनोयोग से संभालने लगेंगे। सचिन ने यह बात सबको बता दी थी -- यह जानकर सभी दुखी थे और दिल से दुआ कर रहे थे कि इस बार उनका सपना जरूर पूरा हो जाए। जिस दिन उनका पेपर था

उस दिन सुबह-सुबह ही राम उपाध्याय ने हनुमान टेकरी का प्रसाद लाकर उन्हें खिलाया था। केसरवानी उनके लिए वाहे-गुरु से मन्नत माँगने गया था और शहरयार ने पीली-कोठी पर उनके लिए हरी चादर चढ़ाई थी और वहाँ से तबर्रुफ में रेवड़ी तथा मिश्री लेकर आया था। पूरा ओल्ड हास्टल चाहता था कि भास्कर राव यहाँ से अपनी अभिलाषा पूर्ण कर ही वापिस जाएँ।

पेपर होने के दस दिन बाद का उनका रिजर्वेशन था अतएव इन दिनों में हॉस्टल में उत्सव जैसा माहोल रहा। एक दिन भास्कर राव ने अपनी तरफ से सबको पार्टी दी -- उन्होंने अपने हाथों से सबको इडली बना कर खिलाईं। जाने से एक दिन पहले सभी ने मिलकर उनके सम्मान में विदाई पार्टी का आयोजन किया। विदाई पार्टी क्या थी हॉस्टल डे जैसा रंगारंग धमाल कार्यक्रम था- गीत, संगीत, डांस, चुटकुले और सबसे बढ़कर भास्कर राव का गायन। छह साल बाद उन्होंने हॉस्टल में कोई गीत गाया था। वर्तमान में हॉस्टल में रहने वाले किसी भी लड़के ने उनका गाना नहीं सुना था। पहले उन्होंने एन.टी. रामाराव की फिल्मों के कुछ डायलॉग सुनाए और फिर एस.पी. बालासुब्रमण्यम के गीत गाए। इसके बाद हेमंत कुमार के एक से बढ़कर एक सदाबहार गीत सुनाकर सबको चोंका दिया। रात में तीन बजे तक यह मस्ती भरा कार्यक्रम चलता रहा। किसी की इच्छा नहीं थी कि कार्यक्रम कभी खत्म हो या इस सुहानी रात की सुबह भी हो।

सुबह होते ही बाबूलाल आ गया था और भास्कर राव का सामान पेक करने में उनकी मदद करने। हॉस्टल के दूसरे बच्चे भी उनसे मिलने आ जा रहे थे। कोई उनके साथ फोटो ले रहा था तो कोई पैर छूकर आशीर्वाद। सब दुखी थे -- यह जान कर कि वह जा रहे हैं -- फिर ना आने के लिए -- ग्यारह साल पहले वे जिस तरह कुछ बनने का सपना लेकर आये थे अब लौट कर जा रहे हैं वैसे ही खाली-खाली, अपूर्ण -- अधूरे से। राम उपाध्याय तो उनसे मिलकर रो ही दिया। वापस कमरे में जाकर भी बहुत देर तक वह तकिए में मुँह छुपाकर बुदबुदाता रहा था - सुना है भगवान के घर देर है अन्धेर नहीं -- पर लगता है अन्धेर भी है। भास्कर राव जैसे फरिस्ता दिल इन्सान की भी भगवान कितनी परीक्षा ले रहा है -- हमारी प्रार्थनाएँ भी व्यर्थ जा रहीं हैं ।

सामान की पेकिंग पूरी हो चुकी थी। ट्रेन छूटने में लगभग दो घण्टे का समय शेष था। बाबूलाल कमरे के एक कोने में उदास खड़ा लगभग रो देने की स्थिति में था। भास्कर राव उसे समझा रहे थे। कुछ बच्चे कमरे के बाहर खड़े थे। देवेन्द्र पंचोली हाथ

में एक कागज पकड़े हाँफता हुआ आया। उसके पीछे-पीछे दो लड़के ढोल लेकर आए थे। आते ही वह भास्कर राव से लिपट कर रोने लग गया - 'सर आप पास हो गये हैं -- अभी आप हमें छोड़ कर जा रहे थे अब हम आपको विदा करेंगे धूमधाम से।'

'क्या कहा देवेन्द्र तुमने -- फिर से बोलो -- क्या भास्कर राव इंजीनियर बन गया --' कहते हुए भास्कर राव ने भी देवेन्द्र को अपनी बाँहों में जकड़ लिया। उनकी आंखों से भी जलधारा बह निकली। मन का उद्वेग सारे बाँध तोड़ कर निर्बाध बह चला था। उनके कमरे के सामने बच्चों की भीड़ बढ़ती जा रही थी। सभी की आंखे भीगी हुईं थी - खुशी से -- प्रार्थना सुन लिए जाने से -- ईश्वर के घर अन्धेर नहीं है की बात सही सिद्ध हो जाने से --

--- --- ---

देवता

तोरन सींग आज बहुत प्रसन्न था। उसके बेटे सूरज सींग को बारहवीं पास करते ही बड़े साब ने बर्कचार्ज में बाबू बना दिया था साथ ही यह भरोसा भी दिलाया था कि सूरज जैसे ही कम्प्यूटर की परीक्षा पास कर लेगा उसे वह रेगुलर कर देंगे। इस खुशी को सबसे बाँटने तोरन साब से तीन दिन की छुट्टियाँ लेकर अपने गाँव आया था। तोरन के ख़ानदान में पहली बार कोई सरकारी बाबू बना था। उसके सारे सगे सम्बन्धी या तो खेतिहर मज़दूर थे या फिर उसकी तरह साब लोगों के बँगलों पर काम करते थे। उसकी पत्नी पूनिया तो जैसे अपने मोड़े की उपलब्धि पर बौरा गई थी। दिन में कितनी ही बार वह सूरज का माथा चूम चुकी थी ।इसी खुशी में उसने बिरादरी वालों को ग्राम देवता के चबूतरे पर पूड़ी-रायता जींमने का न्योता तक दे डाला था।

बड़े साब ने बोला था सूरज को सोमवार को ही ड्यूटी ज्वाइन कराने के लिए -- अतएव तोरन सूरज को लेकर इतवार को ही गाँव से वापस आ गया। सूरज की पोस्टिंग साब ने अपने चहेते कार्यपालन यंत्री के आफिस में की थी। सूरज के काग़ज़ पत्तर पलटते हुए बड़े बाबू बिंदेसरी यादव ने पहले तोरन और फिर सूरज की ओर इतनी पैनी निगाहों से देखा कि दोनों ही सिहर गए। तोरन हाथ जोड़कर लगभग गिड़गिड़ाते स्वर में बोला - 'कोनऊ कमी है का बाबू जी -- बचवा है -- आप समझा दो पूरी कर लावेगो -- मैं तो कछू समझूँ न -- दूसरी जमात तक ही पड़ो है हमने', 'नहीं नहीं -- कोई कमी नहीं है -- सब काग़ज़ दुरुस्त हैं।।' बिंदेसरी यादव बोले - 'तुम्हें पता है कि लड़के के कितने नम्बर हैं'

'नाँय मालूम मोए -- इत्तो पता है कि वाय फस्ट कलास आओ है और इंजीनरिंग को इम्तहान भी पास करो है तबईं बड़े साब ने ईखों बाबू बना दओ' - कहते हुए तोरन की आँखें गर्व से दमकने लगी।

''तुम लड़के का कैरियर बरबाद कर रहे हो तोरन -- तुम्हारा लड़का तो हीरा है हीरा -- इसे क्यूँ बाबू बना रहे हो -- तुम बताओ सूरज -- कौन सा

इंजीनियरिंग का इम्तिहान पास किया है तुमने' - बिंदेसरी ने उत्सुक निगाहों से दोनों की ओर बारी-बारी से देखा।

'जी, पी.ई.टी. पास किया है -- एस.सी. की मेरिट लिस्ट में 133वां नम्बर है -- सब कहते हैं कि मनचाही ब्राँच मिल जाएगी -- पर बहुत पैसा लगता है पढ़ाई में -- बापू ख़र्च नहीं उठा पाएँगे -- बड़े साब ने कहा कि तुम्हें पक्की नौकरी लगा देंगे -- बहुत इंजीनियर बेरोज़गार घूम रहे हैं' सूरज ने बताया।

'बड़े साब ने ऐसा कहा तुमसे' - बिंदेसरी ने आश्चर्य से पूछा।

'हओ' - जवाब तोरन ने दिया - 'हम कहाँ से लाखों लाते -- फ़ीस देवे खों -- वो तो साब बड़े दयालु हैं -- हम ग़रीबन पर जो इत्ती किरपा करत हैं।'

बिंदेसरी बाबू ने सारे कागज व्यवस्थित किए और सूरज को आफिस में ज्वाइन कराने की आवश्यक कार्यवाही पूर्ण की। बिंदेसरी ने एक बार पुनरू सूरज को सोचने के लिए कहा पर कम पढ़ा-लिखा तोरन तो सूरज के बाबू बन जाने से ही सातवें आसमान पर जा बैठा था। वह तो बड़े साब की किरपा के तले स्वयं को दबा महसूस कर रहा था - उसे समझ में ही नहीं आया था कि बिंदेसरी बाबू बार-बार क्यूँ पूँछ रहा है - कहीं उसका कोई स्वारथ तो नहीं है।

बिंदेसरी बाबू ने सूरज को ज्वाइन करवा लिया था। तोरन सूरज को वहाँ छोड़कर चला गया। शाम को जब दोनों मिले तो तोरन के मन में बहुत से सवाल थे। उसे कोई परेशानी तो नहीं हुई। ईई साब से उसकी भेंट हुई कि नहीं -- कुछ काम भी सीखा कि नहीं -- बिंदेसरी बाबू ने कोई गड़बड़ तो नहीं की -- आफिस के बाकी लोग कैसे लगे उसे --

'बापू -- बिंदेसरी बाबू जी ने फिर से मुझसे कहा था कि तुम्हारे जब इतने अच्छे नम्बर हैं तो तुम बाबूगिरि करके क्यूँ अपना केरियर खराब कर रहे हो -- वह तो बड़े साब को भी इसका दोष दे रहे थे - कि उन्होंने जानबूझ कर मेरा केरियर खराब किया है -- वह कह रहे थे कि मुझे बैंक से लोन भी मिल जाता और कॉलेज की फीस भी माफ हो जाती'- सूरज जो पहले बड़ा खुश नजर आ रहा था, तोरन को कुछ उदास सा लगा।

तोरन को ध्यान आया जब उसने बड़े साब को सूरज के इंजीनरिंग में पास हो जाने की खबर सुनाई थी तो वह बहुत खुश नजर नहीं आए थे और जब उन्होंने सूरज को बाबू बनाने के लिए तोरन से कहा था तो नीला बिटिया भी बड़े साब पर नाराज हुई थी। उसे तो सूरज के बाबू बन जाने की इतनी खुशी थी कि उसे नीला की बात से दुख हुआ था। वह समझ नहीं पाया था कि नीला बिटिया क्यूँ बड़े साब पर नाराज हो रही है।

'तुम बिंदेसरी बाबू की बातन खों दिल पे न लो बिटुआ -- हो सकत है बड़े साब ने कबहुँ ऊखों फटकारो हो जासे वो उनसे चिढ़त हो -- हमने बड़े साब की बरसों सेवा करी तबहुँ उन्होंने तुमाओ इतनो ध्यान रखो -- हम गरीबन की आज सुनत कौन है -- हमाई बिरादरी में आज तक कोनऊ बाबू नई बनो हतो -- तुमने तो हमाओ नाम रोशन कर दओ -- तुम अब मन लगा के काम करो -- साब कछु दिन में तुमाओ परमोसन भी कर देहें --' तोरन ने सूरज को समझाते हुए कहा।

दो माह गुजर गए। सूरज ने आफिस का काम कुछ-कुछ सीख लिया था। सब उसके काम और लगन से खुश थे। तोरन और पूनिया की भी सारी बिरादरी में अपने बिटुआ की उपलब्धि के कारण इज्जत बढ़ गई थी। तोरन भी बड़े साब के इस उपकार के बदले दोहरे चाव से उनकी सेवा में लगा रहता था।

बड़े साब के इकलौते बेटे प्रियेश, यानि कि चिंकू बाबा का पढ़ने में मन नहीं लगता था -- बड़े साब इस कारण परेशान रहते थे। 12वीं में वह एक बार फेल हो चुका था और इसी साल उन्होंने उसका एडमीशन डोनेशन देकर किसी इंजीनियरिंग कालेज में कराया था। बिटिया नीला इस बात को लेकर बड़े साब से नाराज रहती थी और कभी-कभी उनसे सूरज का उदाहरण देते हुए उलझ जाती थी। नीला द्वारा सूरज का इस तरह पक्ष लेना तो तोरन को अच्छा लगता था पर बड़े साब से झगड़ा करना उसे नहीं सुहाता था। उसने एक दो बार अकेले में उसे समझाने की कोशिश भी की थी तो बिटिया ने 'काका तुम नहीं समझोगे' कहकर चुप करा दिया था।

तोरन सींग पिछले चौबीस सालों से बोधराम निरंजन के घर पर काम कर रहा था। उस समय से जब निरंजन नया-नया सहायक यंत्री के पद पर भरती हुआ था। उसकी पहली पोस्टिंग बुन्देलखण्ड के इलाक़े मे हुई थी जहाँ छुआ-छूत और ऊँच-नीच का भेद उस समय समाज में कुष्ठरोग सरीखा जमा बैठा था। इस कारण बोधराम के घर पर कोई भी कर्मचारी काम करने को तैयार नहीं था। उसके पहले पदस्थ रहे मनोरंजन शुक्ल के घर पर काम करने वाले छुटके रैकवार और हरिलाल साहू ने साफ़-साफ़ मना कर दिया था - 'साब हम घर पर काम नहीं करेंगे -- हमारी बिरादरी में बात पता चल गई तो हम समाज से ही बाहर कर दिए जाएँगे -- हमारे बाल-बच्चों के विवाह तक नहीं हो पाएँगे -- और हमारा हुक्का-पानी, आपस में उठना-बैठना तक हराम हो जाएगा।'

सुनकर बोधराम सन्न रह गया था। एक झटके में ही उसकी अफ़सरी धरातल पर आ गई थी। वह दोनों के ख़िलाफ़ अनुशासनहीनता का हण्टर चलाना चाहता था लेकिन जिले के एक अनुसूचित जाति के बीडीओ के समझाने पर उसने अपना इरादा त्याग दिया था। घर के कामकाज के लिए उसने ननिहाल से दूर के एक

रिश्तेदार तोरन को बुला लिया था और उसे घर पर ही सर्वेण्ट क्वार्टर मे रहने की जगह दे दी थी। तबसे निरन्तर तोरन बोधराम के घर पर काम कर रहा था। बोधराम के कई ट्रांसफ़र हुए। शासन के नए बने प्रमोशन-नियमों के तहत जल्दी-जल्दी उसके तीन प्रमोशन भी हो गए और वह अपने साथ नियुक्त हुए अनेक अफ़सरों को पीछे छोड़ते हुए चीफ़ इंजीनियर बन गया। जल्दी-जल्दी बिना बारी के प्रमोशन पा जाने के बाद वह अहंकारी हो गया था और अपने साथी अफ़सरों तक से बदतमीज़ी करने लगा था। तोरन बोधराम के इस बदलते व्यवहार का साक्षी था। जिनसे कभी बोधराम सर कह कर बातें करता था तोरन ने बोधराम को उनसे ही कई बार बुरा सलूक करते देखा था।

चीफ़ इंजीनियर बनने के बाद अपने पहले दतिया दौरे पर बोधराम ने छुटके और हरिलाल सहित वृंदावन पटेल उपयंत्री को भी निलम्बित कर दिया था। वे दोनों वृंदावन की साइट पर ही कार्यरत थे तथा वृंदावन के कहने पर ही अफ़सरों के घरों में काम करते थे। अपनी पहली पोस्टिंग के समय से ही तीनों बोधराम के निशाने पर थे। पर दो माह के अन्दर ही तीनों की बहाली के आदेश बोधराम को निकालने पड़े थे। कर्मचारी नेता भक्तचरण ने धमकी दी थी यदि चौबीस घण्टे के भीतर निलम्बन वापिस नहीं लिया गया तो उसके बंगले के बाहर तम्बू लगाकर भूख हड़ताल की जावेगी।

नौवीं मे पढ़ने वाली नीला को पिता का पक्षपाती व्यवहार पसन्द नहीं आता था। भक्तचरण की धमकी के बाद जब बोधराम को पीछे हटना पड़ा तो वह बहुत आहत था। नीला तीनों की बहाली से खुश थी -- उसने बोधराम को थैंक्स बोला। बेटी के मुँह से ये सुनते ही वह बिफर गया। उसे लगा भक्तचरण के साथ ही उसकी बेटी भी उसकी मजबूरी का मजाक उड़ा रही है। वह बड़ी जोर से नीला पर चिल्लाया -- बिचारी रोती हुई अपने कमरे में चली गई।

बोधराम की पत्नि शामली ने उसे शान्त करने की कौशिश की। बोधराम को भी लगा कि उसने अकारण ही नीला को इतनी जोर से डाँट दिया है। उसने शामली से कहा - 'तुम ही बताओ मैं क्या करूँ -- नीला हर बात में विरोध करती है - वह तो आरक्षण तक की विरोधी है -- यदि यह वैशाखी न होती तो मैं भी इंजीनियर न बन पाता -- चिंकू के रंग-ढंग तुम देख ही रही हो -- बिना आरक्षण के वह कुछ बन कर दिखा सकता है क्या -- आरक्षण के बावजूद भी उसे ढंग की नौकरी मिलेगी मुझे सन्देह है।'

'समय के साथ नीला भी सब समझ जाएगी -- इस उमर में बच्चे ऊँच-नीच नहीं समझते -- उसे भी क्लास में कौन एस.सी. का मानता है - उसकी पहिचान तो एक बड़े अफसर की बेटी की है -- ऊँची जाति के गरीब बच्चों को देखती है तो

व्यथित हो जाती है – उसने आप सरीखे गरीबी के दिन ही कहाँ देखे हैं – आप उससे प्यार से बात किया कीजिये' – शामली ने सलीके से अपनी बात बोधराम के सामने रखी ।

'तुम ठीक कहती हो शामली' – बोधराम ने कहा – 'लेकिन नीला हर बात में हमारा विरोध करती है।'

'सूरज के प्रति आपके रुख ने उसे आहत किया था -- उसे लगने लगा है कि आप स्वार्थी हैं -- आप किसी का हित नहीं कर सकते -- मुझे भी लगता है कि सूरज के लिए आपने सही निर्णय नहीं लिया था -- तोरन समझता है कि सूरज को बाबू बना कर आपने उस पर बहुत बड़ा अहसान किया है। वह तो आपको देवता समझता है।' – शामली का स्वर बहुत संयत था। वह नीला का पक्ष बोधराम को समझाने का प्रयास कर रही थी साथ ही उसे यह भी ध्यान रखना पड़ रहा था कि बोधराम उसकी बातों से आहत महसूस न करे।

'शामली तुम भी मुझे गलत समझती हो -- पर मैंने जो भी किया अपने बच्चों के भविष्य के लिए किया' – बोधराम के स्वर में कातरता थी –'तुम्हें याद है न -- दतिया में कोई भी हमारे घर पर काम करने को तैयार नहीं था -- मैं तोरन को नहीं लाया होता तो खाना बनाने से लेकर चौका-बर्तन भी तुम्हें ही करना पड़ता -- यदि तोरन जैसे लोगों के बच्चे भी अफसर बन जाएँगे तो फिर हमारे चिंकू का क्या होगा -- अफसर का बेटा होकर क्या बाबू बनकर धक्के खाने के लिए छोड़ दूँ उसे -- किसी तरह चिंकू अफसर बन भी गया तो कौन मिलेगा उसके घर पर काम करने के लिए -- मैंने सूरज को लेकर जो भी किया बहुत सोच समझ कर किया -- वह बाबू बनकर खुश है -- और तोरन भी।'

शामली को कुछ भी नहीं सूझा कि क्या बोले। बाहर उसे कुछ गिरने की आवाज सुनाई दी तो वह बाहर निकली। हवा के झोंके से राधा-कृष्ण की मूर्ति गिरकर टूट गई थी ।तोरन टुकड़ों को समेटते हुए अपनी झोली में रख रहा था।

--- --- ---

कौवे

रविकांत की आकस्मिक मृत्यु का मैसेज पढ़ते ही कार्तिक शर्मा को अपनी सारी संज्ञायें जड़ होती प्रतीत हुई। वह धम्म से कुर्सी पर गिरा और अपने दोनों हाथों से सिर पकड़ कर बैठ गया। पास बैठे सहकर्मी मानवजीत ने उसे सहारा दिया और पानी का गिलास आगे बढ़ाते हुए दो घूँट पीने का आग्रह किया। कार्तिक ने स्वयं को सम्हालने की कौशिश की किन्तु बड़ी मुश्किल से मानवजीत से कह पाया – 'मानव, मेरा छोटा भाई नहीं रहा -- प्लीज भोपाल जाने के लिए हम तीनों – मेरा, सरला और नैवे। का तुरन्त किसी फ्लाइट से टिकट करा दो।'

बेंगलौर से भोपाल के लिए पहली उपलब्ध फ्लाइट मुम्बई होकर रात को ग्यारह बजे थी। कार्तिक को उसी फ्लाइट से टिकट बुक कराना पड़े। समय से काफी पहले ही वह सरला और नैवे। को लेकर एयरपोर्ट आ गया। हर पल उसे काट रहा था -- जितनी जल्दी हो सके वह अपने गाँव भानपुर पहुँच जाना चाहता था। हर पाँच मिनट में वह घड़ी की ओर देखता और उसकी सुस्त चाल देखकर मन ही मन खीझ उठता।

रविकांत कार्तिक का चचेरा भाई था लेकिन वह बचपन से ही कार्तिक के साथ रहा था अतएव दोनों के बीच रिश्ता सगे भाईयों से भी बढ़कर था। रविकांत जब तीसरी कक्षा में पढ़ता था तभी चाचा उसे गाँव से शहर में उन लोगों के पास छोड़ गए थे। चाचा गाँव में खेती-बाड़ी का काम देखते थे जबकि कार्तिक के पिताजी पी.डब्ल्यू. डी. में सब इंजीनियर थे और सागर में रहते थे। रविकांत के आने के बाद कार्तिक और उसका भाई सौरभ तथा बहिन वर्तिका बहुत खुश हुए थे।

रविकांत कार्तिक से दो साल छोटा था और सौरभ से केवल ग्यारह दिन बड़ा था। वर्तिका सबसे बड़ी थी। हम उम्र होने के कारण सौरभ और रविकांत में अक्सर बात-बेबात लड़ाई होती तो कार्तिक ही दोनों के बीच सुलह कराता – दोनों को अपने

पास बैठाकर समझाता था। रविकांत गाँव से आया था -- उसे शहरी तौर-तरीकों से बोलने और उठने-बैठने का सलीका नहीं था बस इसी बात को लेकर सौरभ और रविकांत भिड़ जाते। दोनों के बीच लड़ाई का एक और कारण भी होता था जब लूडो अथवा साँप-सीढ़ी खेलते हुए सौरभ बेईमानी कर जीतने की कौशिश करता तो रविकांत बीच में ही खेलना छोड़ देता। बस दोनों झगड़ पड़ते और कभी-कभी तो हाथापाई तक पर उतर आते। हार अक्सर रविकांत की ही होती और वह कमरे में जाकर देर तक सुबकता रहता। कार्तिक और वर्तिका दीदी सौरभ को डाँटती -- सौरभ को भी अपनी गल्ती का अहसास हो जाता और फिर वह स्वयं ही रविकांत के पास जाकर ऊँगलियाँ मिलाकर मिट्ठी कर लेता।

एयरपोर्ट पर फ्लाइट के इन्तजार में बैठे कार्तिक का मन रविकांत की सुधियों में खोया हुआ था। उसका मस्तिष्क चलचित्र की भाँति चल रहा था। रविकांत के साथ बीते दिनों की हर छोटी-बड़ी घटना उसकी चेतना को झकझोर रही थी। वह रोना चाहता था लेकिन बड़ी मुश्किल से अपने आँसुओं के सैलाब को बाँध तोड़ कर बह जाने से रोके हुए था। नैवेद्य सरला की गोदी में रोते-रोते सो गया था। उसे सरला ने बड़ी मुश्किल से चीज-सेण्डविच खिलाकर सुलाया था। उन दोनों ने तो कुछ भी नहीं खाया था।

‘कार्तिक आप धीरज रखिए -- आपकी व्यग्रता मुझे भी व्यथित कर रही है -- एक बार आप गाँव में चाचा जी से भी बात कर लीजिए -- मन हलका हो जाएगा --’ सरला ने कार्तिक के कन्धों पर हाथ रखते हुए कहा।

‘नहीं सरला -- मैं उनसे बात नहीं कर सकता -- मैरी हिम्मत नहीं है उनसे बात करने की -- क्या कहूँगा उनसे -- शान्त हो जाइए -- रोइए नहीं -- क्या हुआ यदि रविकांत नहीं रहा --’ कार्तिक की वाणी में लिपटी पीड़ा, सरला की आँखों से आँसू बन बहने लगी।

‘ठीक है -- लेकिन आप सम्हालिए अपने को -- चलो एक-एक कप चाय पीकर आते हैं -- आप कुछ खा भी लीजिए -- भूखे रहेंगे तो एसीडिटी बढ़ जाएगी’ - सरला चाहती थी कि इसी बहाने कार्तिक थोड़ी चहलकदमी कर लें और विषाद के अपने खोल से बाहर निकलने का प्रयास करें।

‘तुम बैठो -- मैं चाय और कुछ स्नेक्स लेकर आता हूँ --’ कार्तिक ने कहा और स्नेक्स बार की ओर चल दिया।

चाय पीते हुए भी कार्तिक अपने आन्तरिक ऊहापोह में ही फँसा रहा । सरला ने उसका ध्यान भटकाने के लिये कई बार बात करनी चाही पर उसने -- हाँ --

हूँ -- के अतिरिक्त कोई उत्तर नहीं दिया ।

रविकांत आठवीं में मात्र 52 प्रतिशत अंक ही ला सका था। पापा ने उसे बहुत डाँटा था -- एक कार्तिक ही था जिसने उसे हिम्मत बँधाई थी और उसे पढ़ाने का जिम्मा लिया था। उसकी और रविकांत की मेहनत रंग लाई थी -- नौवीं में रविकांत फ़र्स्ट आया था तथा दसवीं में तो उसे तीन विषयों में डिस्टिंक्सन मिला था। सौरभ और रविकांत में झगड़े तब भी होते रहते थे लेकिन सुलह भी दोनो में शीघ्र हो जाती। कार्तिक को याद आया जब एक बार दोनो में झगड़ा हुआ था तो कई दिनों तक दोनों ने एक दूसरे से बात नहीं की थी। रविकांत को माचिस की खाली डिब्बियाँ और सिगरेट के पैकेट के रैपर इकट्ठे करने का शौक था। सौरभ को उसका कलेक्शन देख कर ईर्ष्या होती थी -- यद्यपि सौरभ के पास भी पोस्टल स्टेम्प्स का अच्छा खासा कलेक्शन था जिसे देख कर रविकांत का मन भी ललचाता था। एक दिन सौरभ ने मौका पाकर रविकांत के कुछ रैपर ले लिए -- जब रविकांत ने अपना कलेक्शन चेक किया तो वह तुरन्त समझ गया कि किसने उसके रैपर लिए हैं। उसने भी सौरभ के एलबम से कुछ स्टेम्प निकाल लिए। इसके बाद तो दोनों में जमकर हाथापाई हुई -- वर्तिका दीदी भी दोनों को रोक नहीं सकी थी। कार्तिक ने किसी तरह रविकांत को शान्त कराया था।

गाँव से चाचा-चाची लगभग हर माह दो-तीन दिनों के लिए रविकांत से मिलने शहर आते रहते थे। रविकांत की पढ़ाई-लिखाई से वह संतुष्ट थे। उनकी इच्छा थी कि रविकांत बारहवीं पास करने के बाद उनके साथ गाँव में ही रहे और खेती-बाड़ी के कामों मे उनका हाथ बँटाए। रविकांत उनकी इकलौती सन्तान था लेकिन रविकांत आगे पढ़ना चाहता था। कार्तिक भी चाहता था कि रविकांत अपनी पढ़ाई जारी रखे -- और तो और सौरभ भी नहीं चाहता था कि रविकांत बीच में पढ़ाई छोड़ कर गाँव चला जाए।

इसी बीच कार्तिक एम.बी.ए. करने नोएडा चला गया था। सौरभ का एडमीशन पुणे के इंजीनियरिंग कालेज में हो गया था और रविकांत भी बी.एस.सी. (एग्रीकल्चर) करने जबलपुर आ गया। रविकांत के आगे पढ़ने के निर्णय से सबसे ज्यादा खुशी कार्तिक को हुई थी यद्यपि पापा ने ही चाचा को समझा कर रविकांत को जबलपुर भेजा था।

रविकांत से कार्तिक की अगली मुलाकात डेढ़ वर्ष पश्चात वर्तिका दी की शादी में हुई थी। उसने शादी की व्यवस्था की सारी जिम्मेदारी अपने कन्धों पर उठा रखी थी। वह बहुत बड़ा हो गया था बिल्कुल घर के दूसरे बुजुर्गों की तरह। उसकी बातजीत के लहजे में भी बुजुर्गियत झलकने लगी थी। समय से पहले ही रविकांत का यूँ

बड़ा हो जाना कार्तिक को अच्छा नहीं लगा था। सौरभ तो तब तक वैसा ही बेपरवाह और बिन्दास था।

वर्तिका दीदी की शादी के चार माह पश्चात ही उन लोगों पर दुखों का पहाड़ टूट पड़ा -- तीर्थ-यात्रा पर केदारनाथ गए मम्मी-पापा वहाँ से लौट कर ही नहीं आए -- आई तो उनकी मौत की खबर। बेटी को विदा करने के बाद मम्मी ने इस बार जिद ही पकड़ ली थी वहाँ जाने की। अचानक इस सदमे से उबर पाना उनके लिए बड़ा मुश्किल था -- अभी एक साल बाकी था कार्तिक को अपनी डिग्री पूरी करने के लिए और सौरभ का तो ये दूसरा ही साल था। उनके सामने भविष्य का खौफनाक प्रतिरूप अपने नुकीले डेने फैलाए डसने को तत्पर खड़ा नजर आने लगा था। चाचा ने ऐसे में उन्हें बहुत सहारा दिया। उन्होंने खेत का एक छोटा सा टुकड़ा बेंचकर उनकी पढ़ाई जारी रखने की व्यवस्था की। यह तो उन्हें बहुत बाद में पता चला कि उनकी पढ़ाई के लिए रविकांत ने कितना बड़ा बलिदान दिया था। उसने अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी थी और खेती-बाड़ी में चाचा का हाथ बँटाने लगा था। यह घटनाक्रम याद आते ही कार्तिक की आँखे भर आईं और रुके हुए आँसू अन्ततरू बाहर ढुलक ही पड़े।

फ्लाइट की बोर्डिंग का समय हो चुका था। कार्तिक ने नैवेद्य को गोदी में उठाया और एयरोब्रिज से होते हुए विमान में बैठ गया। उसके विचारों की शृंखला बस उतनी देर के लिए ही भंग हुई, जितनी देर उसे अपनी सीट पर पसर जाने में लगी। विमान में बैठते ही वह फिर यादों की खोह में भटकने को निकल पड़ा।

रात में चार बजे कार्तिक भोपाल पहुँचा। उसने पहले से ही गाँव जाने के लिए टेक्सी बुक कर रखी थी। भोपाल से गाँव तक का सफर लगभग तीन घण्टे का था। जैसे-जैसे उसका गाँव पास आता जा रहा था उसके हृदय की धड़कनें बेकाबू होने लगीं -- आँखों से आँसू बाहर आने के लिए बेताब हुए जा रहे थे -- सरला ने उसे रूमाल दिया -- उसने डबडबाई आँखों से उसकी और देखा और रूमाल लेकर चेहरे को पोंछने लगा। अब तक तो बहुत से रिश्तेदार भी गाँव पहुँच चुके होंगे -- सभी उसी का इन्तजार कर रहे होंगे। चाचा-चाची तो देखते ही लिपट कर आँसुओं से नहला देंगे उसे -- पर वह क्या कहेगा उनसे -- कैसे ढाढ़स बंधाएगा उन्हें -- बुढ़ापे के दिनों में कैसा दुखों का पहाड़ टूट पड़ा है उन पर --

गाड़ी जब गाँव में उसके घर के सामने रुकी तो वह वहाँ का नजारा देखकर आवाक रह गया -- कोई भीड़-भाड़ नहीं -- कोई अफरा-तफरी नहीं -- रोने-धोने की आवाज भी नहीं -- किसी तरह के गम का कोई चिन्ह नहीं -- धड़कते दिल और तेज कदमों से वह घर के अन्दर प्रविष्ट हुआ -- पौंर पार करते ही आँगन में चाची

उसे साबूदाने के पापड़ चादर से निकालते दिखीं -- चाचा आसपास कहीं नहीं थे -- चाची ने उसे देखा तो लगभग दौड़ते हुए उसके पास आईं - 'अरे बबुआ -- आ गए तुम -- बहुरिया भी आई है -- तुम सब वहीं ड्योढ़ी पर रुको -- बिट्टू पहली बार गाँव आओ है ऊकी आरती उतारने है'-- कहते हुए खुशी के अतिरेक में चाची उतनी ही तेजी से चौके की ओर लपकीं । कार्तिक और सरला हतप्रभ खड़े अविश्वास से चाची को देखे जा रहे थे -- उन्हें कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था -- पर क्लांत हृदय की व्यथा जरूर कम हो गई थी -- उनकी आँखों से बहने को आतुर अश्रु सूखने लगे थे -- लेकिन रविकांत है कहाँ -- चाचा भी नहीं है -- किसने रविकांत की मौत की झूठी खबर दी उसे -- किसने ऐसी घृणित शरारत की -- लेकिन उसे खबर तो चाचा के नम्बर से ही मिली थी -- किसने की है चाचा के मोबाइल से ऐसी छेड़छाड़ -- उसे पता लग जाए तो वह उसे छोड़ेगा नहीं -- कितनी पीड़ा सही है उसने पिछले 20-22 घण्टों में -- पल भर में ही कार्तिक ने कितना कुछ सोच डाला । वह सच जानने को उतावला हुए जा रहा था --

'रविकांत कहाँ गया है चाची' - कार्तिक ने आरती की थाली लेकर आती हुई चाची से पूछा।

'वो अपने डूटी पर गओ है कछू जरूरी काम से -- तीन बजे तक आ जैहे' चाची ने बताया।

'वह ठीक तो है -- उसे कुछ हुआ तो नहीं था' -- कार्तिक साफ-साफ पूछने में झिझक महसूस कर रहा था।

'अरे नईं बबुआ -- वो बिल्कुल भलो चंगो है -- ऊकी महरारू अबईं परों मायके गई है -- सोनी के होवे के बाद गई नईं थी अब तक' -- चाची की बातों से कार्तिक को रविकांत के ठीक-ठाक होने का भरोसा तो हो गया था लेकिन उसकी उत्सुकता शान्त नहीं हुई थी। वह आँगन में पड़ी चारपाई पर बैठ गया। सरला चौके में चाची का हाथ बँटाने चली गई। थोड़ी देर में चाची चाय और बेसन के लड्डू लेकर आईं और वहीं कार्तिक के पास जमीन पर बैठ गईं।

'बहुत दुबरा गए हो बबुआ -- इतना ज्यादा काम मती किया करो -- बहू -- तुम भी ध्यान दिया करो -- देखो कैसो चेहरा हो गओ है' -- अब सरला क्या जवाब देती -- कैसे कहती -- जबसे देवर जी की मौत की खबर सुनी है तबसे कैसे अर्द्धविच्छिप्त से थे -- अब थोड़ा सहज दिख रहे हैं।

'चाची' -- कह कर कार्तिक रुक गया और सही शब्द तलाश करने लगा कि किस तरह चाची से अपने मन में चल रहे असमंजस को व्यक्त करे - 'रविकांत के बारे

में कल चाचा की खबर आई थी -- लगता है उनके फोन से किसी ने मजाक किया था।'

'अरे नईं -- वो खबर तो चाचा ने ही दई हती -- हमाए कहबे से' - चाची बोली।

'आपके कहने से -- पर आपने ऐसा करने को कहा ही क्यूँ -- सुनकर हम लोग कितने परेशान हुए बता नहीं सकते' - कार्तिक के अन्दर गुस्से का एक जबर्दस्त गुबार सा उठा, जिसे बड़ी मुश्किल से उसने नियंत्रित किया।

'कल सबेरे-सबेरे जब रबी अपनी डूटी पर जा रओ तो ऊने कौवे के ऊपर कौवा बेठो देख लओ हतो -- सबेरे सबेरे इतनो अशुभ -- हमई ने चाचा से कहके सभी नाते-रिश्तेदारों को खबर कराई ती -- कि लोग रो-धो के शोक मना लेहें तो अशुभ टल जैहे' - कहते-कहते चाची की आँखे नम हो गई।

कार्तिक को कुछ समझ में नहीं आया -- पर उसे लगा वह धड़ाम से आसमान से जमीन पर आ गिरा है -- वह बुरी तरह छला गया है -- रविकांत की मौत पर दिल ही दिल में वह कितना रोया है -- अब उसका मन सिर धुनने का हो रहा था।

'भैया -- आप तो हमसे भी पहले पहुँच गए --' यह सौरभ की आवाज थी जो अभी-अभी अन्दर आया था। उसके साथ पत्नि सीमा और वर्तिका दीदी भी आईं थी। थोड़ी ही देर में रविकांत के मामा और बुआ भी आ गईं।

तब तक संयत हो चुकी चाची का संयत स्वर उसके कानों में पड़ा - 'बबुआ -- हमाए बुन्देलखण्ड में कौवा के ऊपर कौवा खों बैठो देखवो बहुत बड़ो अशुभ मानो जात है -- देखवे वाले की अकाल मर्तू तक हो जात है -- परके साल ही गोकूल कक्का को नाती ऐई कारन चल बसो हतो -- गाँव के भजनलाल पण्डित और रामरतन गुनिया ने जैई जतन बताओ हतो -- नजदीकी नाते-रिस्तेदार रविकांत की मर्तू को शोक मना लेहें तो बिपती टल जैहे -- नईं तो अनहोनी होके रैहे -- अब तुमईं बताओ बबुआ हम का करते' कार्तिक ने उठकर चाची को सम्हाला और उनके गले लग गया। अब रुके हुए आँसुओं को और रोक पाना उसके लिए मुश्किल हो गया था --

--- --- ---

कोचिंग

बड़ा लज्जित महसूस किया था उसने जब आई.आई.टी. कोचिंग के पहले टेस्ट का परिणाम आया था। छयालीस बच्चों के बीच उसका बयालीसवां नम्बर था। पापा-मम्मी ने जिन अपेक्षाओं के साथ उसे इतनी दूर आई.आई.टी. की कोचिंग के लिये भेजा था, उसे उनकी उम्मीदें ढहती हुई प्रतीत हुई थी। कई दिन लग गए थे उसे निराशा के इस अँधेरे से निकलने में। मेहनत तो वह खूब करता था परन्तु जिस एकाग्रता की जरूरत ऐसी परीक्षाओं के लिए होती है वह उससे नहीं हो पा रहा था। जितना वह मन को स्थिर करने की कोशिश करता उतना ही उसका मन भटकता हुआ छतरपुर की गलियों में पुराने दोस्तों, माँ और सांभवी के बीच ले जाता। मोबाइल पर माँ से वह रोज ही बात करता था लेकिन उन्हें कितना मिस करता है यह कहने का साहस उसे नहीं होता था। सांभवी -- उसकी प्यारी छुटकी, कितना अर्सा बीत गया था उससे झगड़ा किए हुए -- उसकी चोटी खींचकर सताए हुए -- कोटा आकर उसे उसकी हर छोटी-छोटी बात याद आती थी। वह भी तो उसे कितना परेशान करती थी -- जब भी उसके साथ चेस खेलती तो सम्भावित हार को भाँप कर हमेशा मोहरों को उछाल देती थी और दूर खड़ी होकर जीभ दिखाती थी। कैरम खेलते हुये भी अक्सर वह ऐसा ही करती थी।

एक बार तो सांभवी ने हद ही कर दी थी जब उसने उसके साथ चेस खेलने से मना किया था तो चिढ़ कर उसने टेबल टेनिस के नए बटरफ्लाय रेकेट की रबर ही निकाल दी थी। वह कितना रोया था और झगड़ा था सांभवी से -- कई दिनों तक वह उससे बोला भी नहीं था। अब इस घटना को याद कर उसे दुख होता है। सांभवी की ऐसी कितनी ही नादानियाँ अकेले में उसके साथ गल-बैंया करती, कभी उसकी आँखे नम कर जातीं तो कभी होंठो पर हँसी ले आती। उसे लगता कि इन दो तीन माहों में एकाएक वह बहुत बड़ा हो गया है- 16 साल से एकदम 25 साल का। सोचता तो फ़िर

सोचता ही रहता वह -- चलचित्र की भाँति अनेक चित्र उसके मन-मस्तिष्क पर उभरते चले जाते। जब याद आता कि सुबह उसका फिजिक्स का टेस्ट है तो हड़बड़ाकर उठता, मुँह पर पानी के छींटे मारता और फ़िर किताबों में खो जाने की कोशिश करने लगतां

दो माह बीतते-बीतते उसने अपनी रेंकिंग में कुछ सुधार कर लिया था। यह स्थिति सुखद तो नहीं थी -- पर उसे आगे बढ़ाने में शक्तिवर्धक टॉनिक की तरह अवश्य थी। उसे पता था मंजिल काफी दूर है। वह निर्धारित समय में सभी प्रश्नों को हल नहीं कर पा रहा था। समय का दवाब उसे हरा रहा था। कई प्रश्न उसे आते हुये भी छूट जाते थे। अगले एक माह तक वह अपनी रेंकिंग मे मामूली सुधार ही कर पाया। उसके मन मे डर बैठने लगा कि समय के कारण वह पीछे छूट जाएगा। उसके साथी भी उसकी कोई मदद नहीं करते थे वह उनका प्रतिद्वंदी जो था। कॉम्पटिशन की इस भावना के कारण बहुत से बच्चों की बाल-सुलभ मौलिकता खतम हो रही थी। अधिकांश बच्चे एक-दूसरे को सहयोगी समझते ही नहीं थे। टीचर्स उसकी मदद तो करते थे परंतु अंग्रेजी में बात ना कर पाने की अपनी कमजोरी के कारण वह उनसे पूछने में झिझक महसूस करता था -- कहने को तो वह भी छतरपुर के एक नामी कॉन्वेण्ट स्कूल में पढ़ता था -- पर अंग्रेजी के स्थान पर वहाँ अधिकतर पढाई हिन्दी में ही होती थी। इस कारण भी उसकी जिज्ञासाएँ मन में ही दबी रह जातीं थी।

दोस्त बनाने में वह शुरू से ही सेलेक्टिव था। अव्वल आने वाले स्टूडेण्ट उसकी ओर उपेक्षित नजर से देखते थे और जो उससे दोस्ती करना चाहते थे उसे वे लड़के पसन्द नहीं थे। टेस्ट में सबसे फिसड्डी रहने वाले नंदन मेहरा और सुरेश जाटव अक्सर उसके आगे पीछे घूमते रहते थे और 'चिकने क्या हाल हैं' कहते हुए अजीब निगाहों से उसे देखते थे। वह यथासम्भव उनसे बचकर ही रहता।

चित्रा के रूप में उसे अपने स्वभाव के अनुरूप दोस्त मिली। चित्रा को भी एक दोस्त की तलाश थी। वह भी उसी की तरह एक छोटे शहर देवास से कोचिंग लेने आयी थी। दोनों में शीघ्र ही गहरी दोस्ती हो गई। वह दूसरे बच्चों की तरह खुदगर्ज नहीं लगी थी उसे -- उसी की तरह निश्छल और सहज स्वभाव की थी वह। वह अपनी माँ के साथ एक फ्लेट लेकर रहती थी।

कोचिंग क्लास में भी वह चित्रा के पास ही बैठने लगा था। कई बार क्लास अनवरत रूप से छः सात घण्टे लगती और बीच में बमुश्किल बीस मिनट का ब्रेक -मिलता। चित्रा उसके साथ अपना टिफिन शेयर करती और जिद करके अपने हिस्से

के ब्रेडरोल और गाजर का हलवा भी उसे खिला देती। दिन-प्रतिदिन वह अपने में बहुत परिवर्तन अनुभव करने लगा था। घर की भी अब उतनी याद नहीं सताती थी। चित्रा की संगति में वह ज्यादा खुशमिजाज और व्यवस्थित हो गया था। वीकली-टेस्ट्स में भी उसका परफ़ोरमेंस सुधरता जा रहा था। चित्रा उसकी यथासम्भव मदद करती थी।

कोटा में उसका मन लगने लगा था। ऑण्टी के यहाँ का खाना भी उसे अब उतना तीखा नहीं लगता था। शुरू-शुरू में तो उससे वहाँ का खाना खाया ही नहीं जाता था। इतनी मिर्ची -- हे राम -- हर निवाले के साथ वह पानी पीता रहता था। रात में जलन होती तो जेलुसिल सीरप लेता।

दीपावली पर उसे छः दिनों की छुट्टियाँ मिली थी। सांभवी, माँ, पापा, दादी और दोस्तों को कोटा के अनुभव सुनाने में ही सारा समय निकल गया। घर पर सभी ने उसमे बहुत परिवर्तन महसूस किया -- वह बड़ा धीर-गम्भीर हो चुका था। मम्मी-पापा तो यह देखकर बहुत आश्वस्त हुए पर सांभवी को अचम्भा हुआ कि भाई अब सच में बड़ा भाई हो गया है। जब वह कोटा वापस आने को था तो तभी रुचिरा दीदी की शादी का कार्ड मिला। रुचिरा उसकी बुआ की लड़की थी -- वह चाह कर भी उनकी शादी में शामिल नहीं हो सकता था।

वह दुखी मन से कोटा वापस लौटा तो एक और बुरी खबर ने उसे अन्दर तक हिला दिया। उसके साथ कोचिंग में पढ़ने वाले सार्थक विश्वास ने पंखे से लटक कर जान दे दी थी -- सार्थक कोटा के माहोल में स्वयं को एडजस्ट नहीं कर पा रहा था। टेस्ट में भी वह अन्तिम तीन से ऊपर नहीं उठ पा रहा था -- नंदन मेहरा और सुरेश जाटव तो उससे भी नीचे रहते थे टेस्ट में -- पर दोनों को कभी चिन्ताग्रस्त नहीं देखा था उसने -- हमेशा किसी ना किसी के चक्कर में लगे रहते थे। पर सार्थक अक्सर अकेला ही रहता था -- किसी से ज्यादा बातें भी नहीं करता था। खबर सुनकर वह रोया तो नहीं लेकिन अन्दर तक हिल जरूर गया था। अपेक्षाओं से मुक्ति का क्या केवल यही एक तरीका है -- पेरेण्ट्स तो भले के लिए अपने से दूर पढ़ने को भेजते है -- यदि उसका मन यहाँ नहीं लग रहा था तो उसे अपने पेरेण्ट्स से बात करनी थी -- वेसे तो आज हर पेरेण्ट्स का सपना ही अपने बच्चों को आई.आई.टी. में पढ़ाना है -- पेरेण्ट्स भी अपने बच्चों का मन क्यूँ नहीं समझ पाते और उन्हें अपने से दूर इस कोलाहल में छोड़ जाते हैं भटकने के लिए -- कितने किस्से सुने हैं उसने पिछले तीन-चार माहों मे मन को झकझोर देने वाले -- सात-आठ बच्चों ने पिछले सत्र में अपनी जान दे दी थी मेंस पास नहीं कर पाने के कारण -- स्मिता का किस्सा तो सबसे

अलग था -- वह तो प्रेग्नेण्ट थी इसलिए उसने फाँसी लगा ली थी।

वह हर बात अपनी माँ से शेयर करता था -- उनसे बात कर उसके मन को सुकून तो मिलता ही था उसे हर मुश्किल से जीतने का साहस भी मिलता। जब भी वह इस तरह की किसी घटना के बारे में सुनता -- कुछ बनने के उसके इरादे और भी मजबूत हो जाते -- वह कतई कमजोर नहीं है -- किसी भी स्थिति में हार नहीं मानेगा -- हर स्थिति से लड़ेगा वह -- वह कायर नहीं है जो भाग खड़ा होगा -- सोचते हुए उसका मन आत्मविश्वास से भर जाता।

ऑण्टी के यहाँ उसके अतिरिक्त देवांग रहता था, जो उससे दो साल सीनियर था तथा दो बार मेंस एग्जाम दे चुका था किन्तु एक बार भी पास नहीं हो पाया था। बड़े ही बेफ़िक्र किस्म का लड़का था वह -- पढ़ाई को लेकर जरा भी गम्भीर नहीं दिखता था। कोचिंग के बाद रूम पर उसने देवांग को शायद ही कभी पढ़ते देखा था। जब भी वह ऑण्टी के यहाँ देवांग से टकराता तो वह मोबाइल पर बतियाते ही दिखाई देता। वह सोचता बड़े बाप का बेटा है इसलिए मौज करने यहाँ आया है। दोनो में हाय-हैलो के अतिरिक्त ज्यादा बात भी नहीं होती थी। दोनों के नेचर में भी बहुत अन्तर था। जहाँ देवांग को फैशनेबल कपड़े पहिनने और तरह-तरह के गैजेट साथ रखने का शौक था वहीं उसे इन सबसे ज्यादा सारोकार नहीं था। वह जिस काम के लिये कोटा आया था वह उसी में फ़ोकस रहना चहता था। देवांग से ही उसे पता चला था कि वह पापा-मम्मी से जिद करके अपने कुछ दोस्तों के साथ यहाँ कोचिंग के लिये आया था। उसके कुछ दोस्त जे.ई.ई. में पास होकर निकल गये थे कुछ आल इण्डिया इण्ट्रेंस टेस्ट में सेलेक्ट हो गये और कुछ स्टेट पी.ई.टी. से इंजीनियरिंग में चले गये। उसे एक साल की और छूट मिली थी किस्मत आजमाने के लिए -- इसके बाद वह चला जायेगा। क्या करेगा -- यह तब तक निश्चित नहीं कर सका था वह। देवांग उसे किसी पहेली से कम नहीं लगता था। हर माह के पहले सप्ताह में वह ऑण्टी से दो-तीन दिन की छुट्टियां लेकर अपने किसी अंकल से मिलने जाता था। जब लौटता तो उसके साथ कुछ नये कपड़े, गैजेट और कुछ गिफ्ट भी होते थे।

जब वह कोटा आया था तब माँ ने उसे बहुत सारे इंस्ट्रक्शंस दिये थे -- क्या करना है और क्या-क्या नहीं करना है। दो साल तक कोई फिल्म नहीं देखनी है -- ना ही क्रिकेट में समय गंवाना है -- आई.पी.एल. तो कतई फॉलो नहीं करना है। टेबल-टेनिस के रेकेट को हाथ नहीं लगाना है और स्केचिंग को तो भूल ही जाना है। सुबह-शाम दूध जरूर पीना है और खाने मे लापरवाही बिल्कुल नहीं करना है। बाप रे

इतने इंस्ट्रक्शन एक साथ -- उसने सोचा था -- पर माँ को उनकी सारी बातें मानने के लिए आश्वस्त किया था। टेबल-टेनिस और स्केचिंग उसके फ़ेवरिट शौक थे। टेबल टेनिस में वह स्कूल की टीम में था और स्केचिंग में तो संभाग लेवल की स्पर्धाओं में दो बार सिल्वर मेडल जीत चुका था। माँ की आज्ञा का उसने अब तक पूरा ध्यान रखा था और अपने शौकों को उसने सपने पूरे होने तक तिलांजलि दे दी थी। चित्रा को गाने का शौक था। वह तो अपने साथ हारमोनियम भी लेकर आयी थी और यदा-कदा रियाज भी करती रहती थी। गाकर वह पढ़ाई के तनाव को कम करती थी और रेफ़्रेस फील करती थी। जब भी वह चित्रा को गाने के लिये कहता वह उसके लिये एक ही गीत गाती थी -- 'पापा कहते हैं बड़ा नाम करेगा'

चित्रा उसे स्केचिंग के लिये प्रेरित करती थी, पर वह टाल जाता था। जब एक दिन चित्रा ने उससे बहुत जिद की तो उसे मानना ही पड़ा। अगले दिन उसने चित्रा का ही स्केच बनाकर उसे गिफ़्ट किया तो चित्रा की खुशी देखने लायक थी। उसकी आँखों में अजीब सी चमक उतर आयी थी -- उसने भी अपने दिल में कुछ अलग सी हलचल महसूस की थी। रात में जब उसने माँ से बात की तो उन्हें सब -- सब नहीं जितना जरूरी था उतना सब बता दिया - ''माँ, तुम नाराज मत होना प्लीज, आपसे किये प्रॉमिस को मैंने आज तोड़ दिया है -- कई दिनों से स्केच बनाने का मन हो रहा था तो आज बनाया है एक स्केच -- अब आगे ध्यान रखूँगा माँ'' उसे लगा था माँ नाराज होगी पर वह तो खुश हुई सुनकर -- 'शानू, मेरे बच्चे, मुझे नहीं पता था तुम प्रॉमिस को लेकर इतने सीरियस होगे -- मैं तो केवल यही चाहती थी कि तुम जिस काम के लिये इतनी दूर गये हो उसके उद्देश्य से नहीं भटको -- क्यूँकि मैने तुम्हें खाना-पीना भूलकर स्केचिंग में खोते देखा है -- तुम तो हर काम ही उसमे डूबकर करते हो -- मेरे लाल -- कभी-कभी तुम स्केचिंग भी कर सकते हो और क्रिकेट भी देख सकते हो --' उसे लगा माँ का गला रुँधने लगा है और वह बोलते बोलते रुक गई हैं।

माँ की बातों से उसे बहुत हिम्मत मिली और दिल का बोझ भी उतर गया। उत्साह में उसने वह स्केच अपनी व्हाट्सएप प्रोफाइल में लगा दिया। सांभवी का तुरन्त मेसेज आ गया - 'भैया तो तुमने यह स्केच बनाया है - कौन है यह -- अभी माँ को बताती हूँ -- तुम कैसी पढ़ाई कर रहे हो, सब पता लग गया है मुझे -- -- अरे डर गये -- तुम भी क्या याद करोगे भैया -- नहीं बताऊँगी -- दिखने में तो कोई खास नहीं है ... फ़िर तुमने इसका स्केच क्यूँ बनाया -- अच्छा सबसे पहले प्रोफाइल से ये

पिक हटाओ -- किसी ने देख ली तो खैर नहीं तुम्हारी।'

सांभवी भी कितनी बड़ी और समझदार हो गयी है -- सात-आठ महीने में ही छोटी सी गुड़िया से एकदम जिज्जी बन गयी है -- कैसी होगी सांभवी -- किससे लड़ती होगी -- बहुत लापरवाह है वह तो -- स्कूल में तो वह उसका ध्यान रखता था -- अब कौन रखता होगा उसका ध्यान। अरे नहीं -- मेरे दोस्त आबिद और नवीन तो हैं उसका ध्यान रखने के लिये। दोनों उसे छोटी बहिन जैसा ही मानते है -- सांभवी उन्हें राखी भी बाँधती है हर साल -- दोनों के बहिन भी नहीं है कोई । आबिद, उसका दोस्त, उससे बहुत बड़ा लगता है -- दीवाली पर जब मिला था तो साले के थोड़ी-थोड़ी मूँछे भी आ गई थी -- सहसा ही उसे हँसी आ गई और उसने अपना हाथ अपने होंठों के ऊपर फ़ेरकर देखा कहीं उसके भी तो मूँछ नहीं निकल आयीं। आबिद इस साल क्रिकेट टीम का कप्तान था। उसकी अगुआई में स्कूल ने सम्भागीय टूर्नामेण्ट भी जीता था। अपने इसी शौक के चलते आबिद ने कॉमर्स ले लिया था।

नवीन को थियेटर का शौक था। स्कूल के नाटकों में तो वह भाग लेता ही था शहर की एकमात्र रामलीला में भी उसने इस साल लक्ष्मण का रोल किया था। गुल दीदी के थियेटर ग्रुप से भी वह जुड़ा हुआ था। उसके पास चुटकुलों का असीमित भण्डार था -- तारीफ़ की बात यह कि उसे परिस्थिति के अनुरूप चुटकुले सुनाने की समझ भी थी। सांभवी से उसकी इस कारण कुछ ज्यादा ही घुटा करती थी। उसकी संगत में सांभवी ने भी चुटकुले नाटकीय अन्दाज में सुनाना सीख लिया था। एक बार तो स्कूल में उसने हद ही कर दी थी -- एक्टीविटी के पीरियड में उसने ऐसा मजाक किया था कि सारे टीचर्स और स्टुडेण्ट उसी की ओर देखने लगे थे। जोक किसी ने सुनाया था पर उसने बीच में कूदकर टीचर्स की सरासर इंसल्ट कर दी थी। जो जोक सुनाया गया था ठीक ठीक तो याद नहीं पर उसमें पूछा गया था कि भैंस हमें क्या देती है - तो सांभवी चहक कर बोल पड़ी थी - 'होम वर्क' -- और पूरी क्लास में सन्नाटा छा गया था। मुटल्लो क्लास टीचर अपनी झेंप छुपाते हुये जबरन हँसने का प्रयास कर रही थी। बाद में उसने सांभवी को ले जाकर उनसे माफ़ी माँगी थी और बात आई गई हो गई थी। अब फ़िर सांभवी ने कुछ ऐसा वैसा कर डाला तो -- अरे नहीं करेगी वह -- बहुत समझदार हो गई है - - देखा नहीं किस तरह उसने चित्रा की फोटो व्हाट्सएप से हटवाई है । संतोष की गहरी सांस लेते हुए वह खुद को किताबों में खपाने का प्रयास करने लगा।

आठवें मंथली टेस्ट में उसे चौथी रेंक मिली। वह बहुत खुश था - वह चित्रा

के साथ इस खुशी को सेलीब्रेट करना चाहता था – उसने बिग बाइट रेस्ट्रां से चित्रा के पसंदीदा पनीर रोल और बी. एण्ड आर. आइस्क्रीम पार्लर से मिण्ट चॉकलेट चिप्स आइस्क्रीम पेक कराई। वह चित्रा के फ्लेट की ओर जा ही रहा था कि रास्ते में नंदन मेहरा टकरा गया। उसका हाथ पकड़ कर बोला – 'चिकने कहाँ जा रहा है – मेरे रूम पर चल – बहुत मजा दूंगा तुझे।'

'छोड़ो मुझे' – कहते हुए उसने किसी तरह अपना हाथ छुड़ाया और दौड़ लगा दी। इस आपाधापी में सारा सामान सड़क पर ही बिखर गया। रूम पर आकर वह बहुत रोया।

वह अब तक हर अनहोनी के बाद स्वयं को मानसिक रूप से पहले से कहीं ज्यादा मजबूत बनाता आया था पर इस घटना ने उसे बहुत व्यथित कर दिया था । वह रात भर सो नहीं सका। बार-बार नंदन का चेहरा, उसका हाथ पकड़ना और बहशी आमन्त्रण उसकी नजरों में घूम जाता। सुबह जब उठा तो पूरा बदन टूट रहा था – ठीक से चलते भी नहीं बन रहा था। अगले दिन कोचिंग भी नहीं गया। शाम को चित्रा उसके रूम पर आ गई । क्या बताता उसे -- कैसे बताता उसे -- ये भी कोई बताने की चीज है – चित्रा बार-बार पूछती रही पर वह 'कुछ नहीं -- कुछ नहीं' कहकर टालता रहा।

इस बीच उसे देवांग की याद आई। देवांग दो दिनों से अपने रूम में ही था। वह अन्दर चला गया। देवांग के कमरे में किताबें कम अनेक तरह के गेजेट की भरमार थी -- टेबल पर पॉवरबैंक, एफ़.एम. रेडियो, सी.डी. प्लेयर, लेप टॉप, आई पेड, ब्लू टूथ, ब्राण्डेड घड़ियाँ, टाइटन आई के चश्में और ना जाने क्या क्या... वह तो सबके नाम भी नहीं जानता था। इसके अतिरिक्त महँगी जींस और टी शर्ट कुर्सी पर पड़ी हुई थी। उसे विश्वास हो गया कि देवांग बहुत पैसे वाले का बेटा है जिसके लिये कोचिंग-क्लास मनोरंजन का स्थान है।

दो दिन पहले ही देवांग अंकल से मिलकर आया था। इस बार अंकल ने देवांग को केसियो रिस्टवॉच और पेपे जींस गिफ़्ट की थी। उसे पिछले माह देवांग के अंकल से हुई मुलाकात याद आ गई। जिद करके देवांग उसे अंकल से मिलने उनके होटल ले गया था। पहली नजर में अंकल उसे बहुत भले और नेक इंसान लगे थे। उस दिन दोनों ने ही अंकल के साथ खाना खाया था। दो घण्टे तक वह अंकल के साथ रहा था जब उसने लौटने के लिये कहा तो अंकल और देवांग ने भी उसे रात में वहीं रुकने के लिए कहा था -- दोनों ने अगले दिन सावन-फुहार वॉटरपार्क जाने का कार्यक्रम

बना लिया था और उससे भी चलने को कहा था। पर वह किसी तरह बहाना बना कर अकेला लौट आया था। अंकल उसे पार्कर पेन का एक सेट गिफ्ट करना चाहते थे पर उसने शालीनता से मना कर दिया था। अंकल ने उसे गले लगा कर और उसके गालों को थपथपाकर विदा किया था।

इसके बाद उसे देवांग के अंकल के बारे में जानने की इच्छा होने लगी थी। वापस लौटने पर देवांग ने बताया था – 'खत्री अंकल से पहली बार वह एक दोस्त के साथ मिला था -- दोस्त की भी किसी सोशल साईट पर उनसे मुलाकात हुई थी -- अंकल की जालंधर में स्पोर्टस गुड्स की मेन्यूफ्रेक्चरिंग यूनिट है -- अपने बिजनेस प्रमोशन के लिये वह हर माह यहाँ आते हैं दो–तीन दिनों के लिए।'

'वह हर बार इतने महँगे –महँगे गिफ़्ट क्यूँ देते हैं' उसने कह तो दिया फ़िर उसे लगा कि यह कहकर उसने गल्ती कर दी है।

'वह कहते है कि मुझसे मिलने के बाद उन्हें यहाँ पर बहुत बिजनेस मिलने लगा है और उनका बिजनेस खूब चलने लगा है -- उन्होंने तो पहली भेंट में ही मुझे इण्टेक्स का स्मार्टफोन दिया था -- इसके बाद से जब भी उन्हें बड़ा ऑर्डर मिलता है वह मुझे कुछ ना कुछ गिफ़्ट करते हैं -- एक बार मैं उनके साथ उदयपुर गया था तो उन्हें एक करोड़ का ऑर्डर मिला था -- तबसे वह मुझे हर बिजनेस ट्रिप में अपने साथ ले जाते हैं।'

उसे देवांग की कहानी पता नहीं क्यूँ बड़ी रहस्यमयी लगी थी। वह यहाँ कोचिंग लेने आया था लेकिन एक अनजान अंकल के बिजनेस की उसे ज्यादा चिन्ता थी। यह बात उसे कचोटती थी और वह इसका उत्तर तलाशने की कौशिश लम्बे समय से कर रहा था।

तभी अंकल का फोन आ गया। वह जालंधर पहुँच गये थे। देवांग ने उन्हें बताया कि अभी शशांक उसके पास बैठा है। देवांग का इस तरह उसके नाम का जिक्र करना उसे असंगत लगा। वह उठ कर जाने लगा तो देवांग ने रोक लिया। कुछ देर तक कमरे में सन्नाटा छाया रहा। देवांग की कराह के साथ कमरे में पसरा मौन टूटा। देवांग के पेट में मरोड़ उठी थी -- वह उठकर बाथ रूम की ओर भागा – 'शशांक तुम रुकना अभी।'

देवांग के फोन पर बार–बार मैसेज आ रहे थे -- वह अपनी उत्सुक्ता को रोक नहीं पाया और देवांग का फोन उठाकर देखने लगा। अंकल का मैसेज था -- ''तुमसे मिलकर जब भी आता हूँ तो मन बहुत उदास रहता है -- कुछ दिनों तक

तुम्हारा हैंग ओवर रहता है -- अगली बार जब मैं आऊँगा तो अपने दोस्त को मिलने के लिए जरूर लाना -- बड़ा कमसिन है कमबख्त''

मैसेज ने उसका मूड खराब कर दिया। उस रात भी वह पढ़ नहीं सका। उसे ठीक से नींद भी नहीं आई। उसे बार-बार अंकल से हुई पहली मुलाकात याद आ जाती -- जिस तरह से उन्होंने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे गले लगाया था और उसके गाल थपथपाए थे -- उसमें उसे पितातुल्य अंकल का वात्सल्य तो उस दिन भी नहीं लगा था - आज वह उस स्पर्श के माने जान गया था -- उसने क्लास में जतिन मिश्रा और भुवन काले के बीच कुछ-कुछ होने वाले किस्से सुने थे -- नंदन मेहरा और सुरेश जाटव के इशारे भी वह समझता था। लेकिन वही सब अंकल और देवांग --- उसका सर घूमने लगा और वह कब सो गया उसे पता ही नहीं चला।

वह कौशिश करके भी अपने मानसिक विचलन को समेट नहीं पा रहा था। अगले दो टेस्ट्स में उसकी रेंकिंग गिरकर सत्रहवीं हो गई। चित्रा भी असमंजस में थी -- वह उससे भी ज्यादा बात नहीं कर रहा था। क्लास में भी दूर बैठने लगा था।

ग्यारहवीं की परीक्षाएँ आ रहीं थी अतएव दो माह के लिए कोचिंग क्लासेज बन्द होने वाली थीं। वह चित्रा से नजरें चुरा कर शीघ्रता से क्लास रूम से बाहर निकल आया था। नंदन मेहरा भी तेजी से उसके पीछे लपका। चित्रा ने दोनों को बाहर जाते देख लिया था।

'चिकने कब तक तड़पायेगा -- जाने से पहले एक बार तो देता जा' - नंदन उसका रास्ता रोक कर कह रहा था।

तड़ाक -- नंदन के गाल पर झन्नाटेदार तमाचा पड़ा। दोनों के बीच चित्रा खड़ी थी - 'अबे उससे क्या माँगता है -- मुझसे माँग -- मैं देती हूँ -- क्या चाहिये तुझे - बोल हरामी के पिल्ले।'

नंदन भाग खड़ा हुआ । चित्रा उसका हाथ पकड़ कर एक तरफ ले गई। वह कुछ बोल नहीं सका -- आँखों से आँसू बह रहे थे उसकी -- चित्रा भी रो रही थी। समय का कैसा फेर है ये -- देश में दामनियाँ भी सुरक्षित नहीं है -- और तो और लड़के भी -- लड़कों का दिखने में अच्छा होना भी उतना ही बड़ा अभिशाप है।

देवास जाने से पहले चित्रा और ऑण्टी ने उसे ट्रेन में बिठा कर रवाना किया। पूरी यात्रा में चित्रा की याद उसके साथ बनी रही - वह कितना बौना है उसके सामने - कहने को मर्द है लेकिन जरा सी परेशानी में ही टूटने लगा था -- चित्रा तो उसके लिए बिना कुछ सोचे किस तरह भिड़ गई थी नंदन से -- अगर नंदन उसके

साथ कुछ कर बैठता तो -- सोचकर ही उसकी हृदय-गति बढ़ गई -- अब कभी वह चित्रा को दुख नहीं पहुँचायेगा -- हाथ जोड़कर माफी मांगेगा उससे -- उसने अपने सबसे अच्छे मित्र को बहुत दुख पहुँचायेगा है -- चित्रा से माफी जरूर माँगेगा -- वह बहुत भली है -- माफ कर देगी।

दो माह पंख लगाकर उड़ गए -- माँ और सांभवी उसे कोटा तक छोड़ने आए। दो दिन साथ में रहे -- पर सांभवी चित्रा से नहीं मिल पाई -- वह तब तक कोटा नहीं आई थी -- माँ का जाना जरूरी था -- वह पापा और दादी को ज्यादा दिन अकेला नहीं छोड़ सकती थी -- दादी अर्थराइटिस के कारण ज्यादा चल-फिर नहीं पाती थी -- पापा की भी शुगर अक्सर बढ़ जाती थी -- माँ ही उनसे परहेज कराती थीं -- वह स्वयं से तो रत्ती भर भी अपना ख्याल नहीं रखते थे।

कुछ दिन और बीत गये। नंदन जो घर गया तो फिर लौट कर ही नहीं आया -- सामना होने पर उसका दोस्त सुरेश भी नजरें नीची किए निकल लेता। आई.आई. टी. मेंस का रिजल्ट आ गया। उसे अच्छे मार्क्स मिले थे लेकिन देवांग इस बार भी असफल हो गया था। वह इम्तहान देने के लिये घर गया था तो लौट कर ही नहीं आया था। शायद उसे पता था कि उसका रिजल्ट क्या आने वाला है। कोचिंग, पढाई और चित्रा के साथ उसकी दिनचर्या इतनी व्यस्त थी कि उसे देवांग के बारे में सोचने का ज्यादा समय ही नहीं मिला।

एक दिन जब वह कोचिंग से वापस लौटा तो ऑण्टी उसे बाहर ही मिल गईं। उन्होंने उसे बताया कि देवांग अब नहीं आएगा। उसके पापा ने आठ-दस लाख का कर्ज लेकर उसे कोचिंग के लिए कोटा भेजा था। तीन बार में भी जब वह मेंस ही क्लीयर नहीं कर पाया तो हताशा में और कर्जदारों के दवाब के चलते उसके पापा ने ट्रेन से कटकर आत्महत्या कर ली। आज ही उसके अंकल उसका सारा सामान ले गए हैं। सुनकर उसे रोना आ गया -- आँखों के सामने अँधेरा घिरने लगा -- यदि ऑण्टी ना संभालती तो वह गिर ही जाता। उस दिन ऑण्टी ने उसे कमरे में नहीं जाने दिया -- नीचे अपने पास ही सुलाया, अपने हाथों से ही उसे खाना खिलाया । रात में उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा - 'शशांक तुम बहुत बहादुर बच्चे हो और समझदार भी - मैने तुम्हें बहुत जिम्मेदारी से सब काम करते देखा है - हर परिस्थिति से जूझने की ताकत है तुममें -- आज तुम्हारे पापा का फोन आया था - दादी नहीं रहीं।'

वह एकदम चौंक कर उठ बैठा - 'क्या कह रहीं हैं ऑण्टी आप -- मम्मी ने तो कुछ नहीं बताया मुझे -- दोपहर में ही बात हुई थी उनसे - मेंस के रिजल्ट के बारे

में बताया था।'

''इसके बाद ही तुम्हारे पापा का फोन आया था – उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि तुम्हारी खुशी के क्षणों में वह ये दुखद खबर कैसे दें – तुम्हारी दादी भी चाहती थीं कि तुम्हें डिस्टर्ब ना किया जाए तभी उन्होंने उनकी बीमारी की खबर भी तुमको नहीं दी थी' – कहते हुए ऑण्टी ने उसे अपने सीने से लगा लिया। वह धीरे-धीरे सुबक रहा था। ऑण्टी ने कहना जारी रखा – 'अब तुमको दादी की इच्छा पर भी खरा उतरना है -- पापा चाहते हैं कि तुम अपनी कोचिंग पर फोकस करो और इस दुख को अपनी राह में आड़े ना आने दो।''

जब वह कुछ संयत हुआ तो उसने सांभवी को फोन लगाया – 'छुटकी तुमने भी मुझसे दादी की बीमारी की बात छुपा कर रखी' – कहते कहते वह रो दिया – 'मैं दादी को देख भी नहीं सका।'

'भैया' – सांभवी और कुछ ना बोल पाई, रोने लगी। माँ से बात करने की उसकी हिम्मत नहीं हुई।

उसे दो दिन लग गये सामान्य होने में। इस दौरान चित्रा ने उसे एक पल के लिए भी अकेला नहीं छोड़ा। जिस दिन दादी का दसवां था उस दिन सुबह-सुबह सबसे पहले उसने अपना सिर मुंडाया उसके बाद ही कोचिंग गया। क्लास में सबको पता लग गया -- सबने दादी की आत्मा की शांति हेतु प्रार्थना की और मौन रखा।

दादी की मौत ने उसे बहुत दुख पहुँचाया था -- पर उसका निश्चय और दृढ़ हो गया था -- उसे जीतना ही है -- अपने लिये, दादी के लिए, पापा के लिये, चित्रा के लिये और देवांग के लिये भी। देवांग के लिए इसलिए भी ताकि भविष्य में कोई देवांग बनने कोटा न आए। जब अगले मंथली टेस्ट का परिणाम आया तो वह क्लास में सबसे आगे था -- इतना आगे कि दूसरे स्थान पर आने वाली चित्रा उससे पूरे दो अंक पीछे थी। चित्रा से आगे निकल जाना उसे अच्छा तो नहीं लगा था पर चित्रा खुश थी। इसके बाद तो हर टेस्ट में पहले दो स्थान उन दोनों ने अपने लिए सुरक्षित कर लिए -- कभी वह आगे रहता तो कभी चित्रा।

आई.आई.टी. एडवांस का जब रिजल्ट आया तो दोनों ही प्रथम पचास बच्चों में स्थान बनाने में सफल रहे। वह सोच रहा था कि कुछ बनने के सफर में कितना कुछ छूट जाता है पीछे – ना वह परिवार की खुशियों में सम्मिलित हो सका और ना दुख के क्षणों में वह परिवार का साथ दे सका। समय चलता है तो चीजों भी पीछे छूटती चलती हैं – उसने बहुत कुछ खोया है पर दूसरे नजरिये से देखें तो जिंदगी के

सही मायने भी सीखे हैं - हार ना मानने के, हर हाल में होंसला कायम रखने के, टूटने के क्षणों में स्वयं को सहेज कर रखने के -- और सबसे बड़ी बात अपने लिए सही मित्र चुनने के -- उसे चित्रा ना मिली होती तो नंदन मेहरा उसका मानसिक शोषण करता रहता या फिर वह भी जतिन मिश्रा या भुवन काले की प्रतिकृति बन जाता या कोई खत्री अंकल उसे देवांग बना सकते थे -- सब कहते ही है यह उम्र होती ही है बहकने की -- कोचिंग में तो केवल विषय सिद्धि ही सिखाई जाती है असली कोचिंग तो जिंदगी का सार समझने की है जिसे कोई सिखाता नहीं है स्वय सीखना होता है-- वह इस कोचिंग में भी पास हुआ था।

--- --- ---

दीपदान

छत्रसाल कॉलोनी में प्रवेश करते ही था देवेश का घर। उसके मम्मी-पापा दोनों ही शहर के नामी डॉक्टर थे – मम्मी आँखों की और पापा पैथोलॉजिस्ट। घर पर ही उन्होंने एक छोटा सा क्लीनिक और पैथोलॉजी लेब खोल रखी थी। देवेश के घर से तीसरा घर दीपांजना का था -- और फिर राजुल, शशि व हितेश के। कालोनी के पार्क के दूसरी ओर कबीर, रत्ना, सौम्या और सूरज रहते थे। सभी एक ही स्कूल में पढ़ते थे। होमवर्क करने के बाद शाम को पार्क में इकट्ठे होते और आइसपाइस, खो-खो, पिट्ठू और कभी-कभी क्रिकेट जैसे खेल खेलते थे।

स्कूल की छुट्टियाँ लग चुकी थी। दीपांजना, देवेश, कबीर सभी तीसरी कक्षा में आ गए थे। हितेश, सौम्या, सूरज चौथी में तो राजुल, शशि और रत्ना दूसरी में। दिन में तेज धूप के कारण किसी को बाहर खेलने की इजाजत नहीं थी अतएव सभी दोस्त बारी-बारी से किसी के घर चले जाते और वहीं दोपहर गुजारते थे। उस समय लूडो, साँप-सीढ़ी, चायनीज चेकर, कैरम व व्यापार उनके पसन्दीदा खेल हुआ करते थे। कभी-कभी अन्ताक्षरी भी खेलते और स्नेहा दीदी जब फुरसत में होतीं तो सभी लड़कियों को डाँस का अभ्यास भी कराया करतीं।

ऐसी ही एक दोपहर में सभी दोस्त देवेश के घर खेलने के लिए इकट्ठे हुए थे। उस दिन उसके मम्मी-पापा को दोपहर में बारसीलोना से आए सुशांत अंकल से मिलने अपने किसी दोस्त के यहाँ जाना था। वे दोनों सभी बच्चों को घर पर ही रहने की हिदायत देकर गये थे। अब बच्चे ही घर के मालिक थे। उस दिन सबने खूब धमा-चौकड़ी मचाई। जब सब थक कर बैठे सुस्ता रहे थे तो दीपांजना ने प्रस्ताव रखा – 'चलो अब हम सब क्लीनिक में डॉक्टर-मरीज खेलते हैं -- बहुत मजा आएगा।'

सब बच्चे तुरन्त तैयार हो गए। देवेश और सौम्या डॉक्टर बन गए। हितेश और कबीर कम्पाउण्डर व शशि नर्स बनी। बाकी के बच्चे मरीज। सौम्या स्टेथेस्कोप

लगाकर मरीजों को चेक करने का उपक्रम करने लगी। रत्ना खाँसते हुए आयी और बोली – 'डॉक्टर साब तीन दिन हो गए बहुत खाँसी आ रही है -- कोई ऐसी दवा दीजिए कि तुरन्त खाँसी गायब हो जाए।'

सौम्या ने रत्ना के चेस्ट और पींठ पर स्टेथेस्कोप लगाकर जाँच की और किसी एक्सपर्ट डॉक्टर की तरह कहा – 'ऊँ -- मामला सीरियस हो गया है -- एक्सरे कराना पड़ेगा -- कल एक्सरे कराकर फिर से आओ -- तब तक आराम के लिए मैं तुम्हें इंजेक्शन लगा देती हूँ।'

'इंजेक्शन - - न बाबा न -- मैं इंजेक्शन नहीं लगवाऊंगी' – रत्ना हाथ नचाते हुए बोली।

'अरे अम्मा -- तुम्हें पता ही नहीं चलेगा और इंजेक्शन लग जाएगा -- बिल्कुल भी दर्द नहीं होगा' – हितेश ने रत्ना को लिटाकर सधे हुए कम्पाउण्डर की तरह झूठ-मूठ का इंजेक्शन लगा दिया। बाकी बच्चे यह सब देख कर हँस रहे थे -- उन्हें मजा आ रहा था।

देवेश मम्मी की तरह आँखों का डॉक्टर बना था। वह भी मरीज बने बच्चों की आँखों का परीक्षण कर रहा था। राजुल को देखते हुए उसने कहा – 'तुम्हारे चश्मे का नम्बर फिर से बढ़ गया है – लगता है तुमने मेरी सलाह नहीं मानी -- रोज हरी सब्जियाँ खाओ और चश्मे को हमेशा लगाकर रखो।' राजुल ने रुआँसा मुँह बनाया और नाक पर झुक आए चश्मे को ठीक किया। दोनों की बात सुन रही दीपांजना बोल पड़ी – 'आँटी तो आँखों में दवा डालकर देखती हैं -- देव तुम नकली डॉक्टर लग रहे हो -- सौम्या को देखो बिल्कुल एक्सपर्ट लग रही है।'

बात देवेश को चुभ गई। उसने कबीर को मम्मी की क्लीनिक से दवा लाने को कहा। फिर नर्स बनी शशि से दीपांजना की आँखों में दवा डालने को बोला। शशि से दवा की शीशी का ढक्कन ही नहीं खुल रहा था अतएव देवेश स्वयं ही दवा डालने के लिए अपनी सीट से उठ गया। देवेश ने जैसे ही दीपांजना की आँखों में दवा डाली वह जोर-जोर से चीखने लगी। वह दर्द से छटपटा रही थी -- उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था -- वह रोए जा रही थी। उसकी यह हालत देख कर सब बच्चे भी रोने लगे थे।

दीपांजना के पापा और मम्मी उसे हॉस्पिटल लेकर गए। डॉक्टर्स ने चेक-अप कर बताया कि आँख का कार्निया बुरी तरह जख्मी हो गया है -- आँख में तीव्रता वाला एसिड चले जाने से ऐसा होता है -- ऐसी स्थिति में आँखों में रोशनी शायद ही आ पाए। उसे अहमदाबाद, सूरत, अमृतसर या किसी दूसरे बड़े हॉस्पिटल में दिखाने की सलाह डॉक्टर ने दी। उन्होंने अमृतसर में किसी डॉक्टर से बात भी की

और उसे तुरन्त ले जाने को कहा।

दूसरी और देवेश का भी रो-रोकर बुरा हाल था। उसकी दुनिया भी गहन अँधेरे में समा गई थी। उस पर पुलिस ने एफ.आई.आर. दर्ज की थी। कोर्ट के आदेश पर उसे बाल सुधार गृह भेज दिया गया। उसके पापा-मम्मी का क्लीनिक बन्द हो गया। लापरवाही के कारण मेडिकल काउंसिल ने उनका रजिस्ट्रेशन ही केंसिल कर दिया था। अपने इकलोते बच्चे की हालत ने उन्हें अन्दर तक तोड़ डाला। मम्मी केवल एक बार उससे मिलने आईं थी। बाद में उसे पता चला कि उन्होंने सुसाइड कर लिया है और पापा की कार एक्सीडेण्ट में मृत्यु हो गई। देवेश की हँसती-खेलती दुनिया खेल-खेल में उजड़ चुकी थी। वह दीपांजना का दोषी तो था ही -- मम्मी-पापा की असमय मौत का जिम्मेदार भी स्वयं को समझता था। दस साल की उमर में ही वह इस दुनिया में नितान्त अकेला हो गया था। उससे कभी कोई मिलने भी नहीं आता था - वह हमेशा शून्य में खोया रहता -- गुमसुम और उदास। कभी किसी से बात भी नहीं करता। बाल सुधार गृह की अधीक्षका मंजुला केशवन से जरूर वह कभी-कभी थोड़ी बात कर लेता था। वे उसे पढ़ने के लिए प्रेरित करतीं और यह उन्हीं की कोशिशों का परिणाम था कि जब वह सोलह साल का हुआ तो उसने दसवीं पास कर ली थी।

बाल सुधार गृह से छूटने के बाद देवेश के सामने सबसे बड़ी समस्या थी - वह जाए तो कहाँ जाए। मंजुला जी की सिफारिश पर उसे एक साल पहले ही बाल सुधार गृह छोड़ने के आदेश हो गए थे। वह पश्चाताप और सन्ताप में इतना डूबा हुआ था कि मंजुला जी को लगा कि कहीं वह कोई गलत कदम ना उठा ले अतएव वह उसे साथ में अपने घर ले आईं। कई दिनों की अनवरत काउंसिलिंग के बाद वह अपने खोल से बाहर आ सका। मंजुला जी से पुत्रवत स्नेह पाकर वह थोड़ा सहज हुआ। समय बीतता गया। मंजुला जी की प्रेरणा से ही उसने कम्प्यूटर टेक्नोलॉजी में डिप्लोमा कर लिया। उसे एक मल्टीनेशनल आई.टी. कम्पनी में नौकरी भी मिल गई। वह अब सामान्य लगने लगने लगा था किन्तु जब भी अकेला होता वह दीपांजना के बारे में सोच-सोच कर परेशान हो जाता। कैसी होगी वह -- उसकी जिन्दगी को नर्क बनाकर भी वह कितना मजे में है -- थोड़ी सी सजा काटकर वह समझता है कि उसे उसके पाप से मुक्ति मिल गई -- कैसे मुक्त हो पाएगा वह इस अभिशाप से -- दीपांजना तो बिल्कुल टूट गई होगी -- हर काम के लिए दूसरे पर निर्भर -- सोच-सोच कर वह दीपांजना से मिलने को व्यग्र हो उठता -- रात यूँ ही आँखों में बीत जाती। उसने बहुत कोशिश की थी पर दीपांजना का कुछ भी पता नहीं चल सका था। उस घटना के बाद ही दीपांजना के मम्मी-पापा उसे लेकर अमृतसर चले गए थे फिर वहाँ से वापस

लौटकर नहीं आए। बचपन के दूसरे दोस्तों का भी उसे पता नहीं चल सका। सोशल मीडिया के कितने ही प्लेटफार्म पर उसने दीपांजना को सर्च किया था -- उसे अपनी बेवकूफी पर गुस्सा आता -- कि एक अन्धी लड़की उसे रोशनी वालों की दुनिया में कहाँ मिलेगी।

अचानक ही उसके मन में बचपन के दोस्तों को खोजने का विचार आया -- शायद उनमें से कोई दीपांजना के बारे में बता सके। उसे अकल्पनीय खुशी का अहसास हुआ जब उसने राजुल और सौम्या को ढूंढ़ निकाला। पर दोनों ने बहुत दिनों तक उसकी फ्रेण्ड रिक्वेस्ट को अनदेखा किया -- वह बार-बार उनके मेसेज-बॉक्स में सन्देश भेजता रहा -- पहले मित्रता के भाव वाले शब्दों में - फिर याचक वाले अन्दाज में। सौम्या ने आखिरकार उसकी याचना स्वीकार कर ली। सौम्या एम.बी.ए. करने के पश्चात एक विदेशी बैंक में मैनेजर थी। शुरू में तो दोनों में अधिक बात नहीं हुई लेकिन जैसे-जैसे समय बीता देवेश अपनी बात सौम्या तक पहुँचाने में सफल रहा। सौम्या को भी उससे हमदर्दी हो गयी - थोड़ी सी नादानी ने कितनी पीड़ा दी दोनों को -- वह स्वयं भी कई दिनों तक उस घटना से उबर नहीं पाई थी ओर सपनों में तो उसे दीपांजना की करुण चीख कई दिनों तक सुनाई देती रही थी। सौम्या के कहने पर राजुल ने भी देवेश की और दोस्ती वाला हाथ बढ़ा दिया। उसने इण्डस्ट्रीयल इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन करने के बाद प्लास्टिक मोल्डिंग की यूनिट लगा ली थी। दोनों ने ही दीपांजना को खोजने में मदद का विश्वास दिलाया। अब तीनों के ही जीवन में अभिशप्त दीपांजना लौट आयी थी और तीनों ही उसके बारे में जानने को उत्सुक थे।

कुछ दिन और बीत गए। एक दिन ऑफिस से आने के बाद देवेश छत पर टहल रहा था कि सौम्या का फोन आ गया - ''तुम्हारे लिए खुश खबरी है देव --''

''जल्दी बोलो--'' देवेश के स्वर में अधीरता की स्पष्ट झलक सौम्या ने महसूस की।

''तुम्हें याद है ना कबीर की -- वह इसी शहर में ट्रांसफर होकर आया है -- डिप्टी कलेक्टर है -- बड़े रुतबे हैं उसके -- लालबत्ती गाड़ी में घूमता है।'' - सौम्या ने बताया।

''ओह -- यह तो बहुत अच्छा है'' - सुन कर देवेश को खुशी तो हुई लेकिन निराशा भी -- वह जिस बात को सुनने के लिए अधीर हुआ जा रहा था वह तो उसे सुनने को मिली ही नहीं।

''देव उसके एक बेटी भी है दो साल की - परी कह कर बुलाते हैं उसे'' सौम्या कुछ ज्यादा ही नाटकीय हो रही थी। देवेश को यह रास नहीं आ रहा था।

''इसमें आश्चर्य की क्या बात है -- तुम्हारा बेटा सिंहरण भी तो तीन साल का हो गया है -- हम सब एक ही उम्र के हैं तो हमारे बेटे-बेटी भी तो समान आयु के ही होंगे'' - देवेश ने कहा।

''अरे तुम तो भाषण के मूड में आ गए देव'' - सौम्या ने हँसते हुए कहा - ''पर तुमने तो अब तक शादी ही नहीं की - हम उम्र से क्या होता है।''

देवेश ने कोई जवाब नहीं दिया। उधर से सौम्या की ही आवाज आई - ''ठीक है देव -- पर तुम्हें पता है -- कबीर की पत्नी कौन है।''

''कौन है''

देवेश के स्वर का कम्पन सौम्या ने साफ महसूस किया। बोली- 'दीपांजना'

दीपांजना - सुनकर देवेश अपनी सुध-बुध खो बैठा। उसे कुछ सूझ ही नहीं पड़ा क्या बोले - शब्द उसके गले में अटक कर रह गए। जब थोड़ा संयत हुआ तो बोला - 'सौम्या तुम्हें और क्या पता चला दीपांजना के बारे में -- मुझे सब बताओ।'

''कबीर से बस इतनी ही बात हुई थी - मुझे भी एक बैंकिंग वीडियो-कॉन्फ्रेंस में जाना था अतएव मैं भी जल्दी में थी -- मेरे मन में भी बहुत से प्रश्न थे जो मैं कबीर से पूछना चाहती थी -- उसका नम्बर लेकर बाद में बात करने का कह कर मैं चली गई थी।''

देवेश ने सौम्या से कबीर का नम्बर लिया। वह पूरी रात सो नहीं सका। कैसी होगी दीपांजना -- वह कैसे उसके सामने जा पाएगा -- कैसे फेस करेगा उसे -- कबीर कैसे रिएक्ट करेगा -- कबीर ने उससे शादी कैसे की -- दीपा के मम्मी-पापा किसी मुस्लिम लड़के से शादी को तैयार कैसे हो गए -- वे लोग तो बहुत ही रूढ़ीवादी थे। ऐसी कितनी ही बातें उसके मन को उद्वेलित किए हुए थीं। उसका सिर भारी हो रहा था -- वह कब नींद की आगोश में चला गया पता ही नहीं चला। सुबह वह देर तक सोता रहा। ऑफिस भी लंच के बाद गया।

दो दिन तक देवेश इसी उधेड़बुन में रहा कि वह किस तरह और क्या बात करेगा दीपंजना से। बहुत सोच विचार करने के बाद उसने बड़े संकोच और हिम्मत के साथ कबीर को फोन किया। कबीर तुरन्त देवेश को पहिचान गया। कबीर से बात करके देवेश के मन का भय कुछ कम हुआ। उसे जरा भी महसूस नहीं हुआ कि कबीर के मन में उसके प्रति लेशमात्र दुर्भावना है। दोनों ने तय किया कि रविवार की दोपहर कबीर की गाड़ी देवेश को लेने आएगी और लंच कबीर के घर पर होगा।

रविवार को देवेश जब कबीर के घर पर पहुँचा तो सभी उसका इन्तजार कर

रहे थे। मन में उठ रहे तूफान को किसी तरह समेटते हुए और बाहर सुनामी की आशंका से डरते हुए देवेश ने कबीर के घर में प्रवेश किया तो कबीर ने आगे बढ़ कर उसका हाथ अपने हाथों में ले लिया और दीपांजना के सामने जाकर खड़ा हो गया, बोला – 'पता है आज तुमसे मिलने कौन आया है।'

''आपने कहा था कि हमारे बचपन के दोस्त हैं –– नाम तो आपने बताया ही नहीं था –– पूछने पर भी केवल सरप्राइज कहकर टाल दिया था'' – दीपांजना ने कहा।

देवेश को आश्चर्य हुआ कि कबीर ने दीपांजना को उसके बारे में नहीं बताया है। उसकी धड़कनें तेज–तेज चलने लगी –– अचानक यह पता चलने पर कि देवेश आया है – कहीं दीपांजना उसे बाहर निकल जाने के लिए ना कह दे। देवेश सप्रयास संयत दिखने की कोशिश कर रहा था कि कबीर के स्वर ने कमरे में पसरी कुछ पलों की चुप्पी को तोड़ा – ''तुम खुद ही पूछ लो दीपा।''

दीपांजना कुछ कहती इससे पूर्व ही देवेश झुककर उसके कदमों मे बैठ गया और हाथ जोड़ते हुए बोला – 'मैं हूँ तुम्हारा अपराधी –– देवेश –– तुम्हें अमावस के अँधेरे में धकेलने वाला –– तुम्हारी जिन्दगी में ग्रहण लगाने वाला –– तुम्हारी हँसती–खेलती दुनिया को उजाड़ने वाला –– मैं कतई माफी के लायक नहीं हूँ –– तुम मुझे दुत्कारो दीपा –– मुझे –– मुझे ––' देवेश की आवाज भर्राने लगी। उसका गला रुंध गया और आँखों से अश्रुधारा बह निकली।

''अरे देव तुम'' – दीपांजना की आवाज में देवेश को अनन्त सुकून देने वाली आत्मीयता का बोध हुआ – 'नहीं देव –– तुम ऐसा मत कहो –– यह तो मेरी किस्मत का दोष है –– मेरी ही किस्मत में जब अँधेरा लिख कर भेजा गया है –– तो तुम खुद को दोषी क्यूँ समझ रहे हो –– मैने ही तुम्हें आँखों में दवा डालने के लिए उकसाया था –– तुमसे कहीं ज्यादा तो मैं दोषी हूँ –– कबीर का भी कम दोष नहीं था –– पर जैसी सजा तुमने भोगी है उसके लिए तो मैं ही जिम्मेदार हूँ –– तुम देख ही रहे हो हम कितना खुश हैं –– कबीर हमारा बहुत ध्यान रखते हैं – हमें तो लगता ही नहीं कि मैं अन्धी हूँ –– तुमने तो जिन्दगी में केवल खोया ही खोया है – आठ–दस साल सुधार गृह में –– असमय मम्मी–पापा भी तुन्हें छोड़ कर चले गए' – दीपांजना का स्वर कातर होने लगा तो कबीर ने उसे सहारा देकर बिठाया।

'तुम कितनी महान हो दीपा –– मेरे अक्षम्य अपराध को तुमने माफ कर दिया –– अब मैं चैन से मर सकूँगा' – देवेश ने दीपा का हाथ पकड़ते हुए कहा।

कमरे में कुछ देर सन्नाटा पसरा रहा। देवेश ने नजर उठाकर पहली बार दीपांजना को गौर से देखा। चहरे पर वही बाल–सुलभ सौम्यता और पहली नजर में ही

नाम के अनुरूप आकर्षित करने वाली दीप्ति -- बस नहीं था तो उन दो दीपों में उजाला -- जिनके बारे में उसने बचपन में कितनी ही बार मम्मी और अनेक आँटियों को कहते सुना था -- कितनी बड़ी-बड़ी आँखें हैं दीपा की -- विल्कुल हिरणियों की तरह।

देवेश के मन को अपार शाँति मिली थी पर मन में कहीं ना कहीं बेचैनी अभी भी थी। दीपांजना ने भले ही उसे माफ कर दिया हो लेकिन वह स्वयं को कैसे माफ कर सकता है। दीपांजना कुछ भी कहे लेकिन यह सच्चाई नहीं बदल सकती कि उसके कारण ही दीपांजना की जिन्दगी में यह गहन अँधेरा है। उसे अपनी गल्ती को सुधारना ही होगा -- वह इस गल्ती को सुधार कर रहेगा।

उसी दिन शाम को जैसे ही कबीर और दीपांजना ने सुना कि देवेश अब इस दुनिया में नहीं रहा -- उनके पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था -- लंच के बाद जब उन्होंने देवेश को विदा किया था तब वह कितना खुश नजर आ रहा था -- परी के साथ भी वह कितना हिल-मिल गया था-- फिर उसने आत्महत्या जैसा कदम कैसे उठाया। दोनों दौड़े-दौड़े अस्पताल पहुँचे। पता चला - कि मरने से पूर्व देवेश ने नेत्रदान करने के लिए अस्पताल को फोन किया था -- सौम्या को भी फोन कर थैंक्स बोला था -- और दो पंक्तियों का एक पत्र छोड़ गया था - 'मैं दीपांजना को अँधेरी दुनिया में छोड़ कर रोशनी में नहीं रह सकता। दीपांजना के दीप फिर से प्रकाश से जगमगाने लगें -- मैं इसी कामना के साथ सबसे विदा ले रहा हूँ -- मुझे माफ कीजियेगा।'

'हवन पूर्ण हुआ' - पण्डित जी की आवाज ने दीपांजना की तन्द्रा को भंग किया । दीपांजना स्मृतियों के समन्दर में हिचकोले खाते हुए किसी प्रोग्राम किए गए रोबोट की तरह पण्डित जी के मन्त्रोचार के बाद स्वाहा बोलते हुए हवन-सामग्री अग्नि को समर्पित कर रही थी । उस दिन 27 फरवरी थी - देवेश की तीसरी पुण्यतिथि का दिन। दीपांजना ने पिछले साल की भाँति इस साल भी देवेश की पुण्य-स्मृति में हवन और पूजा रखी थी । बीस साल पहले घटित सारी घटनाएँ उसके मस्तिष्क में चलचित्र की भाँति जीवन्त हो उठी थीं -- देवेश से आखिरी मुलाकात और फिर उसका अपनी ज्योति देकर उसे दृष्टिहीनता के अंधकार से उबारना -- सभी कुछ दीपांजना के सामने साकार हो उठा था। उसकी आँखों में नमी उतर आई थी।

--- --- ---

आफरीन

मिसेज रचना त्रिवेदी पिछले तीन दिनों से ठीक से सो भी नहीं पा रहीं थी जबसे उन्हें बेटे नीरज और बहू आफरीन के आने की खबर मिली थी। वह बहुत बेचैन थीं - बेटे ने परिवार की मान-मर्यादा, शान, परम्परा और संस्कारों के विरुद्ध जाकर एक मुस्लिम लड़की से शादी की थी । नीरज को कितना समझाया था उन्होंने -- स्वर्गीय पापा का वास्ता भी दिया था -- पास-पड़ोस और नाते-रिश्तेदारों में हुई लव-मेरिज की विफलताओं के उदाहरण दिए थे - पर नीरज सदा एक ही बात दोहराता रहा था - 'माँ, आफरीन वैसी नहीं है - वह सबसे भिन्न है - आप मेरा विश्वास कीजिए -- उससे बेहतर जीवनसाथी मुझे दूसरा नहीं मिल सकता -- मुसलमान होना अपराध तो नहीं है ना माँ - जन्मने के लिए परिवार का चयन किसी के हाथ में कहाँ होता है, आप उससे मिलेंगी तो आपको भी लगेगा -- आपके बेटे ने आपके लिए वैसी ही आदर्श बहू चुनी है जिसकी आपने कल्पना की है --'

बेटे का कोई तर्क रचना को डिगा नहीं पाया था -- वह बेटे के विवाह में भी शामिल नहीं हुई थी - दोनों ने कोर्ट मेरिज की थी - बाद में उन्हें मालूम चला था -- कि दोनों का निकाह भी हुआ है - तबसे उनका मन बहुत खट्टा हो गया था - एक ही बात उनके मन को हमेशा रुई सा धुनती रहती थी - आफरीन ने उनके बेटे को उनसे छीन लिया है -- उसके घरवालों ने षड़यन्त्र करके नीरज का धर्म भ्रष्ट कर दिया है - उन्हें समाज में किसी को मुँह दिखाने लायक भी नहीं छोड़ा -- ।

हिन्दु रीति-रिवाजों को छोड़ कर नीरज के निकाह करने की खबर ने उन्हें बहुत आहत किया था - जिस बेटे को उन्होंने कितनी मुश्किलों में लाड़-प्यार से पाला था उसने एक विधर्मी के चक्कर में पड़ कर उन्हें ही एक प्रकार से त्यागने का फैसला कर लिया था। इसके बाद से वह ना तो किसी रिश्तेदार के यहाँ गईं थीं और ना ही किसी सखी-सहेली के यहाँ - कॉलोनी में भी घर से निकलना लगभग बन्द कर दिया था

– वह घर में सिमट कर रह गईं थी। बद्री काका ने तो उनसे सारे सम्बन्ध तोड़ने का फरमान सुना दिया था –– सुमन दीदी ने भी उन्हें कितनी बातें सुनाईं थी और तो और उनकी प्रिए सहेली लता गौतम एक बार भी उनका हालचाल जानने तक नहीं आई थी –– नीरज के एक रिश्ते ने कितने रिश्तों पर पूर्ण विराम लगा दी थी। यदा–कदा बेटी पूर्वा और दामाद जी आ जाते थे हालचाल जानने –– पूर्वा तो एक बार आफरीन से मिल भी आई थी –– लौटने पर वह भी नीरज के रंग में सराबोर लगी थी उन्हें –– आफरीन की तारीफ में उसके पास शब्द कम पड़ जाते थे – तबसे आफरीन उन्हें किसी जादूगरनी जैसी लगने लगी थी – काले जादू के बारे में उन्होंने सुना तो था पर अब उसका असर महसूस कर रहीं थी।

नीरज और आफरीन ने साथ ही विद्यापीठ से इलेक्ट्रोनिक्स में इंजीनियरिंग की थी और संयोग से दोनों का केम्पस सेलेक्शन भी एक रोबोटिक्स कम्पनी में हो गया था। पढ़ते समय नीरज ने अनेक बार आफरीन का जिक्र किया था परन्तु मिसेज त्रिवेदी ने सपने में भी नहीं सोचा था कि बात इतने आगे तक बढ़ जाएगी। अति सम्मानित ब्राह्मण कुल तथा अपनी सात्विकता और आदर्शों के लिए जाने जानेवाले परिवार का कुलदीपक एक दिन मुसलमान बहू लेकर आएगा, यह कल्पना कर ही वह सिहर गईं थी।

रचना के मन में नीरज और आफरीन के आने को लेकर कोई उत्साह नहीं था। दोनों ने झुककर जब उनके पैर छुए तब भी उन्होंने ना तो अशीर्वाद देने को हाथ उठाया और ना ही हमेशा की तरह अपने कलेजे के टुकड़े को गले लगाया। एक उचाट सी नजर आफरीन पर डाली – आसमानी जार्जट की साड़ी में लिपट कर चाँद ही जमीन पर उतर आया था जैसे – तो रूप के इसी जाल में उलझाया है इसने भोले–भाले नीरज को –– कितना असहाय लगने लगा है बेचारा ––

उस रात भी उन्हें बहुत देर तक नींद नहीं आई –– नीरज, आफरीन और उनके स्वयं के इर्द–गिर्द बुन चुके मकड़ जाल में उलझीं वह बाहर निकलने का रास्ता तलाशती रहीं। परिचितों में हुए कितने ही प्रेम–विवाह उनकी आँखों में तैरते रहे –– मिसेज माथुर का मुरझाया हुआ चेहरा उनकी नजरों से हट ही नहीं रहा था –– जिनके बेटे प्रणव ने एक मलयाली लड़की से शादी की थी। शादी के दो माह के भीतर ही शशि ने मिसेज माथुर का जीना मुश्किल कर दिया था –– बेचारी छोटी–छोटी चीजों को तरसतीं रहती थी। प्रणव सब समझता था लेकिन शशि के आगे भीगी बिल्ली बना रहता था। मिसेज माथुर के चेहरे का नूर ही चला गया था –– उनके पास बेटे के साथ

रहने के अतिरिक्त कोई दूसरा विकल्प नहीं था अतएव वह शशि की हर ज्यादती सहने को अभिशप्त थीं। उनके पति एक आशियाना तक आड़े समय के लिए नहीं बना पाए थे -- रही-सही कसर उनकी बीमारी ने पूरी कर दी थी - बचत के नाम पर जो कुछ था, बीमारी लील गई। मिसेज माथुर को देखते ही वह अक्सर खुद को अन्दर तक भीगा महसूस करने लगती थीं - इकलौता बेटा, वह भी कितना नालायक - कहाँ जाएँ इस उमर में बेचारी - ना उनके पीहर में कोई था और ना ही ससुराल में कोई अपना कहनेवाला।

दिशा गजरेवाले की बेटी नयना की शादी का भी कितना दुखद अन्त हुआ था। उसने घर से भागकर अपने असमिया मित्र से विवाह किया था किन्तु डेढ़ साल में ही गौहाटी से उसके ना रहने की खबर आ गई थी। मंजु नौटियाल के बेटे ने भी गैर समाज में शादी की थी लेकिन उनकी बहू सिमरन आहूजा बमुश्किल एक साल ही उनके साथ रही और पूरे परिवार को दहेज-प्रताड़ना की धाराओं में अन्दर कराकर चली गई। बेचारे कितने पापड़ बेलने के बाद छूटे थे। बेटे संतोष का इलाज आगरा के मनोरोग चिकित्सालय में चल रहा है - पति लकवे का शिकार होकर घर में ही घिसटते रहते हैं। ज्यादा दूर क्यूँ जाएँ - उनके फुफेरे भाई के बेटे विनय ने तो एक सजातीय लड़की से ही प्रेम-विवाह किया था - पर दोनों में शुरू से ही नहीं बनी। तीन साल तक दोनों किसी तरह रिश्ते को ढोते रहे अब कोर्ट में तलाक की सुनवाई चल रही है।

प्यार के रिश्तों की जितनी निगेटिविटी उनके आसपास बिखरी थी वह डरते हुए उन सबको उलट-पुलट कर देख रहीं थी। उन्हें एक भी ऐसा रिश्ता याद नहीं आ रहा था जो इन सब विद्रूपताओं से परे सुख और आनन्द के हिण्डोले में बैठा आसमान नाप रहा हो। उनके पड़ोसी भटनागर और उनकी विजातीय पत्नि चंचल सुखवानी को वो याद करना ही नहीं चाह रहीं थी जो पिछले पन्द्रह सालों से बड़े ही प्रेम पूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनकी बेटी पूर्वा की सहेली सोनिया भी बंगाली शुभेन्दु घोष से विवाह कर पिछले आठ सालों से सुखपूर्वक रह रही है -- पर ये सारे रिश्ते उनके अवचेतन मन में कहीं गहरे में छुप कर बैठे थे।

गायत्री-मन्त्र की मुग्ध करने वाली आवाज को सुनकर सुबह जब उनकी नींद खुली तो वह विस्मय से पूजाघर की ओर लपकी। आफरीन पूजाघर के बाहर द्वार पर आँख बन्द कर बैठी मन्त्रोच्चार कर रही थी। कुछ देर वह आफरीन के शहदीले-स्वर में खुद को डूबता महसूस करती रहीं -- फिर जैसे अचानक उनकी चेतना लौट आई -- वह सोचने लगीं - सच में कितनी बड़ी जादूगरनी है ये लड़की - उन्हें रिझाने के

लिए क्या-क्या यत्न सीख कर आई है - शाम को जब वह घर आई थी तो माथे पर बड़ी सी बिन्दी, मांग में सिन्दूर, गले में मंगलसूत्र और हाथ की कलाई में पूजा का कलावा -- कितना दिखावा कर रही है ये हिन्दु रीति-रिवाज अपनाने का। नीरज को कमरे में बुलाकर उन्होंने साफ-साफ कह दिया - 'तुम लोगों को जब तक रहना है रहो - पर अपनी दुल्हिन से कह दो वह ना तो पुरखों के पूजाघर में जाए और ना ही किचन के अन्दर - उसे जो चाहिए वह जनकिया से माँग ले और मुझे रिझाने के लिए ज्यादा नाटक करने की जरूरत नहीं है -- मैं नहीं आने वाली उसके झाँसे में -- और हाँ -- इस घर में मेरे रहते माँस-मच्छी नहीं आएगी।'

नीरज उनका हाथ अपने हाथ में लेकर पास ही बैठ गया - 'माँ, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ आफरीन ऐसा कोई काम नहीं करेगी जिससे आपको जरा सा भी दुख हो -- आपने देखा ना माँ -- वह पूजाघर के अन्दर नहीं गई, आपकी अनुमति के बिना वह वहाँ जा भी नहीं सकती, यह उसे ध्यान था - किचन में भी वह तभी जाएगी जब आप उससे कहेंगी -- वह जबसे मेरे सम्पर्क में आई है मैने उसका वह निर्मल स्वरूप देखा है जो दुनिया में कम ही देखने को मिलता है आजकल -- वह प्रेम, त्याग, ममता और कर्तव्य की विलक्षण मूर्ति है माँ -- हर धर्म का मन से आदर करती है -- मैने उसके मुँह से कभी किसी की बुराई नहीं सुनी - उसे हमेशा सबकी मदद करने को तत्पर देखा है माँ -- मुझे ऐसी जीवनसंगिनी मिली है -- यह मेरे पूर्वजन्मों का सुफल ही है।

रचना नीरज की ओर देखे जा रहीं थी - कितनी दूर निकल गया है नीरज -- आफरीन ने उसे किस तरह अपने रूपजाल में बाँध लिया है -- लगता है अब वे कहीं नहीं है उन दोनों की जिन्दगी में --। नीरज अब भी उनका हाथ पकड़े अतीत में खोया बोलता चला जा रहा था - 'माँ, जब हम दोनों ने शादी करने का निर्णय लिया था तो हमें पता था कि दोनों के परिवार आसानी से राजी नहीं होंगे -- आफरीन तो बिना आपकी अनुमति के शादी करना नहीं चाहती थी -- उसके घरवालों ने बड़ी हुज्जत के बाद शादी की हामी तो भर दी थी लेकिन इस शर्त के साथ कि दोनों को निकाह करना होगा' -- कहते हुए नीरज रुक गया और माँ की ओर देखने लगा - 'मैं तो तैयार था पर आफरीन नहीं चाहती थी कि मैं ऐसा कुछ करूँ -- तब मैने ही उसे समझाया था -- सभी धर्म तो एक ही हैं -- ईश्वर को पाने का रास्ता है धर्म -- हमारा निकाह हुआ -- शायद ऐसा पहली बार हुआ होगा जब एक हिन्दु लड़के का निकाह हुआ हो -- आफरीन ने जोर देकर मेरे धर्म परिवर्तन का विरोध किया था -- जिसके आगे उसके

परिवार को झुकना पड़ा था -- वह तो हिन्दु रीत-रिवाजों से शादी की पक्षधर थी -- किंतु माँ आपके ना आने के कारण हमने कोर्ट मेरिज करने का फैसला किया -- माँ मैं आफरीन से बहुत प्यार करता हूँ - मैं उसे नहीं छोड़ सकता था -- आप पर तो मुझे विश्वास था कि आप आफरीन से मिलेंगी तो उसे जरूर अपना लेंगी -- वह है ही इतनी मासूम और प्यारी --'

सूर्यास्त के बाद रचना ने अपने कमरे में आफरीन को मगरिब की नमाज पढ़ते देखा। नीरज भी उसकी बगल में बैठा उसका साथ दे रहा था। वह ठाकुर जी की आरती की तैयारी कर रहीं थी। उनकी आँखों में नमी उतर आई। किसी तरह उन्होंने आरती प्रज्जवलित की और धीरे-धीरे ओम जय जगदीश हरे गाने लगीं -- तभी एक शहदीली आवाज भी उनके स्वर में आ घुली। आफरीन मगरिब की नमाज समाप्त कर पूजाघर की चौखट पर खड़ी थी। नीरज पूजाघर के अन्दर चला आया था।

रात में जनकिया को तेज बुखार हो आया था - उससे बिस्तर से उठा नहीं जा रहा था । नीरज ने उन्हें सुबह की चाय देते हुए पूछा - 'माँ, आपकी इजाजत हो तो आफरीन को खाना बनाने को बोल दूँ - जनकिया चाची को लगता है -- मलेरिया हो गया है - उसे डॉक्टर को दिखा लाता हूँ।'

रचना को असमंजस में देख नीरज बोला - 'माँ, आफरीन ने तो पिछले दस-बारह वर्षों से नॉनवेज को छुआ भी नहीं - जब वह स्कूल में थी तभी विद्यासागर महाराज के प्रवचन सुन कर उसने नॉनवेज त्याग दिया था -- जो आप कहेंगी वह आपके लिए बना देगी।'

'नहीं-- मैं अपने लिए खिचड़ी बना लूँगी -- हाँ तुम लोग अपने लिए जो चाहे बनवा लो' - रचना ने कहा । नीरज को लगा कि वर्फ कुछ-कुछ पिघल रही है।

तीन दिन ऐसे ही गुजर गए। इतवार को नीरज को वापस जाना था। जाने से दो दिन पहले पूर्वा उनसे मिलने आई। आफरीन से वह पहले से ही प्रभावित थी। रचना के मन से भी कुहाँसा छँटा तो था पर वर्षों से जमी काई एकाएक नहीं हटती। आफरीन को किचन में काम करने की इजाजत तो उन्होंने पहले ही दे दी थी - निर्जला एकादशी वृत के दिन उन्होंने आफरीन के साथ पूजाघर में पूजा भी की थी। उस दिन पहली बार उन्होंने पैर छूते समय आफरीन के सिर पर हाथ फेरा था और नीरज को गले लगाया था। इस सबके बावजूद आफरीन को लेकर उनके पूर्वाग्रह बरकरार थे।

उस दिन रचना का सिर भारी हो रहा था - शायद मन में चल रही उथल-पुथल से वह बेचैन थीं। साल भर बाद नीरज ने उनके पास आने की हिम्मत

जुटाई थी पर वह एक भी दिन पूरी सहजता से उससे नहीं मिलीं थी। पूर्वा उनका सिर दबाते हुए कह रही थी - 'परसों भाई चला जाएगा -- पता नहीं फिर कितने दिनों बाद आएगा -- माँ आप उसे माफ क्यूँ नहीं कर देतीं -- आफरीन को अपना लीजिए -- आपकी खुशी तो सबकी खुशी में ही है - जब तक आप उन्हें माफ नहीं करेंगी तब तक दोनों अपना सामान्य जीवन भी शुरू नहीं करेंगे।'

'क्या कहना चाहती हो तुम पूर्वा' - रचना ने थोड़ा विस्मय से पूछा।

'माँ -- आपको मालूम नहीं है - दोनों ने शादी अवश्य की है पर दोनों के बीच आज भी पति-पत्नी का रिश्ता नहीं है -- भाई और आफरीन ने निश्चित किया है - जब तक माँ का आशीर्वाद नहीं मिल जाता वे दोस्त की तरह रहेंगे' - पूर्वा की बात सुनकर रचना अविश्वास से उसकी ओर देखने लगीं। दोनों ने ये बात तो उन्हें बताई ही नहीं -- नीरज ने भी इस बात का जरा भी भान उन्हें नहीं होने दिया था - अरे वह स्वयं भी तो ये समझ पाने में असफल रहीं थीं। पहली बार उन्होंने प्रेम की निर्मल धारा में स्वयं को भीगता महसूस किया -- प्रेम की निश्छलता ने उन्हें अन्दर तक तर-बतर कर दिया - उनका मन अधीर हुआ जा रहा था -- वह दोनों के सच्चे प्रेम की ऊष्मा को महसूस क्यूँ नहीं कर सकीं थी -- वह इतनी कठोर कैसे हो गईं जो प्रेम के उज्जवल स्वरूप को पहिचान नहीं पाईं -- उनका मन कर रहा था कि अभी आफरीन का माथा चूम कर उसे बाहों में भर लें। फिर कुछ सोचते हुए पूर्वा से बोली - 'कल तेरे भाई की शादी है - पूरे रीति-रिवाजों के साथ - रात में बहुत से काम करने है -- मण्डप सजाना है, परिचितों को बुलाना है -- कल नई बहू घर में आएगी - आफरीन, हमारी भाग्यलक्ष्मी बनकर।

--- --- ---

समरसता

पी.एम.टी. का रिजल्ट क्या आया भूपेंद्र निर्मलकर के घर में बवण्डर आ गया। उनकी बेटी पृथा 84 प्रतिशत अंक लाने के बाद भी अन्तिम चयन सूची में स्थान नहीं बना सकी थी जबकि उसकी बुआ मालिनी के बेटे तेजस ने मात्र 28 प्रतिशत अंक पाने के बावजूद अच्छी-खासी रेंकिंग हासिल की थी। उसे प्रदेश के सबसे अच्छे मेडिकल कालेज में एडमीशन मिल जाने की सम्भावना थी। पृथा का रो-रोकर बुरा हाल था। भूपेंद्र और सरिता भी बेटी के दुख में सहभागी थे -- उनके मन में भी आक्रोश था -- पृथा रात-दिन पढ़कर और अच्छे नम्बर लाने के बाद भी टेस्ट में फिसड्डी रहे बच्चों से पिछड़ गई थी। सरकार का ये कैसा समानता लाने का कानून है जो एक ही परिवार के बच्चों के बीच में असमानता की गहरी-गहरी खाइयाँ खोद रहा है। ना चाह कर भी पृथा के मन में बुआ और तेजस के प्रति अच्छे विचार नहीं आ रहे थे। तेजस जो अपने अक्खड़पन और बदमिजाजी के कारण अक्सर ही सबसे डाँट खाया करता था -- अब डॉक्टर बनेगा -- और वह -- जो सबकी लाड़ली थी -- परिवार का गौरव मानी जाती थी -- जिसकी मिसाल दूसरे बच्चों को दी जाती थी -- वह -- वह तो किसी को मुँह दिखाने लायक नहीं रही - - उसकी पहिचान -- उसका अस्तित्व - सब एक ही झटके में तेजस ने नोंच कर फेंक दिया था । अब क्या करेगी पृथा -- बी.एस-सी., बी.ए. या ड्रॉप लेकर एक साल का बलिदान देगी -- अपने घुटनों में मुँह छुपा कर बैठी पृथा रोए जा रही थी।

भूपेंद्र और सरिता को भी बेटी को सान्तावना देने के लिए शब्द नहीं सूझ रहे थे। भूपेंद्र जिसने स्वयं ही इस दंश को भोगा था, बेटी की हालत देखकर अन्दर ही अन्दर काँप उठा था। उसके मन में इस अराजक व्यवस्था के प्रति असन्तोष तो पहले से था पर अब बेटी का हर आँसू उसके मस्तिष्क पर हथौड़ा बन कर घातक प्रहार कर रहा था। उसे डर सता रहा था कि कहीं पृथा अपनी इस तथाकथित असफलता से टूट

कर बिखर न जाए।

पृथा क्लास में हमेशा अव्वल आती थी। स्कूल की सांस्कृतिक गतिविधियों में भी वह बढ़चढ़ कर हिस्सा लेती थी। भरत नाट्यम में तो उसकी सारे शहर में एक विशिष्ट पहिचान थी। अपनी मिलनसारिता और मृदुल व्यवहार के कारण वह स्कूल में खासी लोकप्रिए थी और टीचर्स की चहेती भी। दसवीं की बोर्ड परीक्षा में वह समूचे प्रदेश की मेरिट में 16वें नम्बर पर आई थी -- तब उसे महापौर ने गोल्डमेडल पहनाकर सम्मानित किया था -- और राज्यमन्त्री ने अपनी और से दस हजार का इनाम दिया था। मुख्यमन्त्री निवास पर आयोजित एक सम्मान-समारोह में भी उसे आमन्त्रित किया गया था तथा आगे की पढ़ाई के लिए सरकार की ओर से फीस माफ करने की घोषणा की गई थी। लगभग सभी समाचार पत्रों में उसका फोटो छपा था और कुछ ने तो उसका इण्टरव्यू भी छापा था। स्थानीय चैनल भी दो दिनों तक उसपर विशेष फीचर प्रसारित करते रहे थे। हर जगह पृथा की चर्चा थी। कॉलोनी में तो वह कई बच्चों की रोल मॉडल हो गई थी -- श्रेया, दीपू, रिचा और नंदनी ने तो पृथा जैसी बनकर दिखाने का अपनी मम्मियों से प्रॉमिस भी कर डाला था। सरिता ने समाचार पत्रों की कटिंग सहेज कर ''पृथा : अवर प्राइड'' नाम से एक स्क्रेप बुक भी बनाई थी जिसे वह घर पर आने-जाने वाले मेहमानों को सगर्व दिखाया करती थीं। क्या मतलब रह गया है आज इन उपलब्धियों का -- निरर्थक हैं सारे सम्मान -- खोखले हैं समानता के दावे -- तेजस को देखो -- दसवीं में बड़ी मुश्किल से सेकेण्ड डिवीजन से पास हुआ था। उसकी पॉकेट से कितनी ही बार बुआ ने सिगरेट के पैकेट पकड़े थे -- एक बार तो वह हुक्का गुड़गुड़ाते हुए भी पुलिस द्वारा आकस्मिक रेड में पकड़ा गया था। सुना था फूफाजी ने थानेदार को तीस हजार देकर छुड़ाया था। उसे लेकर बुआ और फूफाजी हमेशा चिन्ता में रहते थे -- पता नहीं क्या करेगा आगे चल कर -- दोनों ही उसे पृथा का नाम लेकर कुछ सीखने का बोलते रहते थे -- यह सुन-सुन कर तेजस पृथा के प्रति ईर्ष्यालू हो गया था। पिछली बार जब वह इंदौर आया था तब रक्षाबन्धन पड़ा था -- बड़े अनमने ढंग से उसने पृथा से राखी बँधवाई थी -- औपचारिकता में उसने पृथा के पैर भी नहीं छुए थे -- बुआ ने टोका भी था लेकिन वह अनसुना कर चला गया था।

बारहवीं में तेजस मात्र 51 प्रतिशत अंको के साथ पास हुआ था और पी.ई.टी. में तो उसके पृथा से एक तिहाई अंक ही आए थे लेकिन फिर भी उसे राज्य के सबसे अच्छे कॉलेज में एडमीशन मिलने वाला था। हमेशा पृथा के सामने आने से

कतराने वाला तेजस अब शान से कॉलर ऊँचा कर उसके सामने आएगा और हो सकता है उसे सान्तावना देकर चिढ़ाए भी। कैसे नजरें मिलाएगी वह अब उससे -- उससे ही क्या दूसरे नाते-रिश्तेदारों से भी -- जब वह उन्हें तेजस को डॉक्टर साब कहकर बुलाते हुए सुनेगी। उपेक्षित और नकारा तेजस अचानक ही कितना महत्वपूर्ण हो गया है -- जितना भी पृथा सोचती उतना ही उसका हृदय विदीर्ण हो जाता और हूँक के साथ आँखों से आँसुओं का नया सोता फूट पड़ता।

पृथा के पापा भूपेंद्र निर्मलकर और तेजस के पिता शालिगराम मालवी ने एक ही पॉलिटेक्निक से सिविल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा किया था। दोनों ही डे-स्कॉलर थे और इत्तफाक से एक ही बिल्डिंग में किराए से कमरा लेकर रहते थे। भूपेंद्र शालिगराम से एक साल सीनियर था। चूँकि दोनों एक ही समाज से थे अतएव दोनों में शीघ्र ही दोस्ती हो गई। भूपेंद्र के पिताजी की इंदौर के पलासिया में लॉण्ड्री थी जबकि शालिगराम के पिता भोपाल में कुछ कॉलोनियों में जाकर कपड़े प्रेस करने का काम किया करते थे। भूपेंद्र के कारण कॉलेज में शालिगराम की ज्यादा रेगिंग भी नहीं हुई थी इसलिए वह भूपेंद्र के प्रति आदर के साथ ही कृतज्ञता का भाव भी रखता था। भूपेंद्र पढ़ाई-लिखाई में अच्छा था, लम्बी कूद और जेवलिन थ्रो में कॉलेज का चेम्पियन भी था। इसके साथ ही वह हेमंत कुमार के गाए गीत भी हूबहू उनकी आवाज में गाता था। कुल मिलाकर भूपेंद्र का व्यक्तित्व काफी आकर्षक और प्रभावी था जबकि शालिगराम शर्मिला और झेंपू प्रकृति का था। वह अधिकांशतः अकेला रहना ही पसन्द करता था। एक साल गुजरते-गुजरते शालिगराम की पर्सनाल्टी में भी काफी परिवर्तन आया। यह सब भूपेंद्र के सान्निध्य का प्रभाव था लेकिन पढ़ाई में वह भूपेंद्र का अनुसरण नहीं कर पाया। पहले साल ही उसकी ड्राइंग और स्ट्रेंग्थ ऑफ़ मटेरियल में बेक लग गई थी। दूसरे प्रयास में भी वह केवल स्ट्रेंग्थ ऑफ़ मटेरियल का पेपर ही निकाल पाया। एक साल बरबाद हो जाने का खतरा शालिगराम के सामने आ खड़ा हुआ तो भूपेंद्र तारनहार बनकर प्रकट हुआ। उसने शालिगराम को एक माह तक लगातार ड्राइंग का अभ्यास कराया। इसके बाद भी शालिगराम जैसे तैसे तीसरे अटेम्प्ट में पासिंग मार्क्स लाकर पास हो सका। दूसरे साल का रिजल्ट तो और भी खराब रहा जब शालिगराम तीन विषयों में फेल हो गया। यह भूपेंद्र का अन्तिम साल था और वह 87 प्रतिशत अंको के साथ पास होकर कॉलेज से निकल गया। शीघ्र ही उसे सिंचाई विभाग में सब इंजीनियर का जॉब भी मिल गया। भूपेंद्र के जाने के बाद शालिगराम की दिक्कतें बढ़ गईं और वह तीन साल का कोर्स साढ़े चार साल में पूरा कर सका।

तीन साल बाद किस्मत ने फिर दोनों को साथ ला दिया। शालिगराम की पोस्टिंग भी उसी डिवीजन में हो गई जिसमें भूपेंद्र पहले से पदस्थ था। शालिगराम ने डिप्लोमा अवश्य पास कर लिया था लेकिन ज्ञान तो वह अर्जित कर ही नहीं पाया था। यहाँ पर भी उसे हर कदम पर भूपेंद्र नाम की सीढ़ी की आवश्यकता पड़ती और भूपेंद्र सदा उसकी मदद करता। भूपेंद्र ने ही उसे सर्वे करने, ले आउट देने, मेजरमेंट लेने और बिल बनाने के तरीके सिखाए थे।

दोनों एक ही डिवीजन में दो साल तक साथ-साथ रहे। इसके बाद भूपेंद्र का ट्रांसफर दूसरे डिवीजन में हो गया। भूपेंद्र को शालिगराम अच्छा लगता था - बुद्धू पर सीधा-सादा -- पर वह समय के साथ स्मार्ट भी होता जा रहा था । मालिनी भी विवाह योग्य हो गई थी। भूपेंद्र ने पिता सुन्दर लाल को एक बार शालिगराम से मिलवाया भी था उन्हें भी वह जम गया था -- अतएव मालिनी का विवाह शालिगराम से हो गया। एक साल बाद भूपेंद्र की भी सरिता से शादी हो गई जो शालिगराम की दूर की रिश्तेदार थी। दोनों ने एक ही साल में पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त किया। तेजस तीन फरबरी को पैदा हुआ और पृथा 14 जून को।

समय आराम से बीत रहा था कि तभी एक चौंकाने वाली घटना घटी। तीन साल जूनियर होने के बावजूद शालिगराम का प्रमोशन सहायक यंत्री के पद पर हो गया। भूपेंद्र के लिए यह अविश्वसनीय था। पता किया तो ज्ञात हुआ कि शालिगराम का प्रमोशन आरक्षित कोटे में हुआ है। यह पता चलते ही भूपेंद्र के पैरों तले से जमीन ही खिसक गई -- उसे लगा कि उसने मालिनी के साथ कितना बड़ा अनर्थ किया है -- लेकिन उसकी बहिन ने उसकी खुशी के लिए कभी उफ भी नहीं की थी। उसे शालिगराम पर बड़ा गुस्सा आ रहा था कि उसने इतने समय तक इस बात को उससे छुपाकर रखा -- कभी जरा सी भी हवा नहीं लगने दी। कितना शातिर है शालिगराम -- केवल दिखने का ही भोला भाला था -- दिल से तो कोयले से ज्यादा काला निकला -- उसकी भी तो गलती है इसमें -- केवल कपड़े धोने और प्रेस करने के समान पैतृक काम की वजह से ही तो उसने शालिगराम को अपनी ही जाति का समझ लिया था -- इसके अलावा उसने कुछ और जानने की कोशिश ही नहीं की थी।

एक सप्ताह बाद जब मालिनी शालिगराम के प्रमोशन की खुशी बाँटने मण्डला से भूपेंद्र के घर उज्जैन आई तो भूपेंद्र उस पर पहले तो बहुत नाराज हुआ फिर हाथ जोड़कर अपनी गलती के लिए माफी माँगने लगा। मालिनी भी हतप्रभ थी -- लेकिन उसके चेहरे पर विषाद की हल्की सी छाया भी नहीं थी। उसने बताया - जब

उसे भी पहली बार यह बात पता चली थी तो वह भी अकेले में घण्टों रोती रही थी और भैया तथा बाबू जी को कोसती रही थी कि किसके पल्ले बाँध दिया है। पर शालिगराम निर्दोष थे पूरी तरह से -- उन्हें तो इसका जरा भी इल्म नहीं था -- वह तो हमें भी कोटे का ही समझते थे -- यह तो उन्हें भी बाद में पता चला कि उनके जिले में हमारी जाति एस.सी. में आती है लेकिन हमारे जिले में सामान्य वर्ग में - कुछ जिलों में धोबी पिछड़ा वर्ग में भी आते हैं। यह जानकर वह भी बहुत दुखी हुए थे और हमसे माफी भी माँगी थी -- वह तो भैया को भी फोन करके सब बताने वाले थे पर हमीं ने उन्हें रोक दिया था। भूपेंद्र का रुख देखकर सरिता को भी चिन्ता हुई थी। वह शालिगराम की चचेरी मौसी की बेटी थी और एस.सी. वर्ग से ही आई थी। लेकिन भूपेंद्र ने इस सम्बन्ध में उससे कभी कोई चर्चा नहीं की और वह पूर्ववत परिवार की चहेती बहू ही बनी रही।

आखिर सरकार की यह कैसी व्यवस्था है -- जातियों का यह कैसा बँटवारा है कि एक ही समाज के लोग उसकी नजर में अलग-अलग श्रेणी के हैं। वैसे भी जाति-पाँति और ऊँच -नीच के खानों में बँटी व्यवस्था के बावजूद सरकार ने एक ही जाति के लोगों के बीच भी यह कैसी खाई बना दी है -- जहाँ भाईचारे की जगह वैमनस्यता पनप रही है । एक ही परिवार के लोग ईर्ष्या की भट्टी में धधक रहे हैं -- मानसिक यंत्रणा से गुजरने को मजबूर हैं। जातियों के इस अभागे भँवरजाल ने प्रेम और सुकून से आगे बढ़ रहे रिश्तों में सेंधमारी कर दी है -- उन्हें नश्तर की नोंक पर बैठा दिया है। क्या कोई शादी-व्याह भी यह पता कर करता है कि उसकी जाति कहीं उस जिले में आरक्षित वर्ग में तो नहीं आती। समाज में इसकी कभी जरूरत ही नहीं पड़ती थी तभी तो तीन परिवारों में से किसी ने इस ओर ध्यान ही नहीं दिया था। सदा ही इस तरह के विचार भूपेंद्र के मन को उद्वेलित करते रहते। उसके मन में कुण्डली मार कर जा बैठी इस तल्खी को वह चाहकर भी नहीं निकाल पा रहा था भले ही मालिनी ने परिस्थिति जन्य समझौता कर लिया था। महीनों निकल गए थे भूपेंद्र को सामान्य होने में और शालिगराम भी उससे बात करने की हिम्मत नहीं जुटा पाया था। कुछ सालों बाद शालिगराम को ई.ई. का भी प्रमोशन मिल गया लेकिन भूपेंद्र तब भी सब इंजीनियर के पद पर ही घिसट रहा था। वह निराश तो था पर उसने इसे अपने भाग्य का फेर समझ कर सन्तोष कर लिया था। अब उसे केवल एक ही चिन्ता सताया करती थी और वह भगवान से प्रतिदिन एक ही प्रार्थना करता कि कुछ भी करना प्रभु -- शालिगराम के अधीन पोस्टिंग मत करना।

पृथा के विलाप से भूपेंद्र एक बार फिर अन्दर तक हिल गया – क्या कसूर है उस मासूम बच्ची का -- वह उन सैकड़ों बच्चों से हर बात में आगे है जिनसे वह हार कर पल-पल बिखर रही है -- माना इस व्यवस्था का पहला शिकार वह स्वयं ही हुआ था पर पृथा का प्रकरण तो उससे बिल्कुल अलग तरह का है – उसकी माँ सरिता तो रिजर्व कोटे की है -- पर उसकी काबिल बेटी नकारा सिद्ध कर दी गई है -- और सरिता के भाई के आवारा बेटे को इतना बड़ा उपहार -- आखिर क्यूँ और किसलिए -- कितनी अन्धेरगर्दी है ये -- कैसा न्याय है ये -- सामाजिक समरसता के नाम पर कैसा खोखलापन है -- वह समझ नहीं पा रहा था चिल्ला-चिल्ला कर रोए या इस विद्रूपता पर अट्टहास करे ---

--- --- ---

चीलिंग सेंटर

दिनकर बड़ी उम्मीदों के साथ अपनी पहली नौकरी का नियुक्ति-पत्र लेकर रतनगढ़ आया था। ज्वाइनिंग को लेकर वह बहुत उत्साहित था। उसके मन में कितनी ही भावनाएँ हिलोरें ले रहीं थी -- कितने ही अरमान इन्द्रधनुषी रंगों में सराबोर होने को बेताब हुए जा रहे थे -- वर्षों से संजोए सपने पंख लगाकार आसमान में विचरने की स्वच्छन्दता चाह रहे थे। जब उसने अपनी ज्वाइनिंग रिपोर्ट चीलिंग सेंटर के मैनेजर वासुदेव पाठक को दी तो उन्होंने गर्मजोशी से उससे हाथ मिलाया और नई नौकरी की शुभकामनाएँ दी। ऑफिस के लोगों से परिचय कराया और फिर शिफ़्ट इंचार्ज आशुतोष सिकरवार को साथ लेकर पूरे प्लाण्ट की कार्यप्रणाली समझाई।

दिनकर को चीलिंग सेंटर में काम करते हुए एक माह हो गया था - कितना कुछ घट गया था इस बीच - उसकी जिन्दगी और सोच की दिशा ही बदल गई थी - क्या-क्या सोचकर आया था वह और क्या-क्या करना पड़ गया था उसे। कितना मुश्किल है नौकरी में रम पाना - पापा क्यूँ हमेशा चिन्तित दिखते थे अपनी नौकरी को लेकर - उसे समझ में आने लगा था। केवल तीस दिनों में ही उसकी सारी धारणाएँ ध्वस्त हो गईं थी - ईमानदारी, सच्चाई और अच्छा आचरण -- सब व्यर्थ की बातें हैं -- किताबी हैं -- उसे समझ में आ गया था - भ्रष्टाचार की जड़ें कितनी गहरी हैं - भ्रष्ट लोग कितने बलशाली हैं -- उफ -- सोच कर ही दिल काँपने लगता है अब तो। जो भी सिस्टम से बाहर अपनी राह खोजने निकला वह फिर कहीं का नहीं रहा - पिछले एक माह में ही उसने कितना कुछ महसूस कर लिया था। महाजन सर का यह कथन - 'जिन्दगी में आगे बढ़ने के लिए प्रेक्टिकल होना बहुत जरूरी है।' हर काल में कितना प्रसांगिक और सार्थक है, इन दिनों में उसने शिद्दत से महसूस किया था। उसे याद हो आया पहले ही दिन का घटनाक्रम -- कैसे उसे शाम को नाइटशिफ्ट के इंचार्ज के रूप में कार्य करने का आदेश थमा दिया गया था। आदेश देख कर ही उसका सिर घूम गया - पहली-पहली नौकरी, ना कार्य करने का

अनुभव, नया प्लाण्ट, नई जिम्मेदारी – उसे ध्यान हो आया रवि अंकल का वह कथन जो उन्होंने उसे समझाते हुए कहा था – 'बेटा, तुम तो मेकेनिकल इंजीनियर हो फिर डेरी की नौकरी क्यूँ करना चाह रहे हो -- डेरियों का वातावरण अच्छा नहीं है तुम्हें बहुत सम्हल कर काम करने की जरूरत होगी -- वहाँ डेरी टेक्नॉलॉजिस्ट की ही चलती है -- सारे मैनेजर भी डेरी बेकग्राउण्ड वाले ही होते हैं इंजीनियरिंग वालों को तो मौका ही नहीं मिलता ऊपर तक जाने का -- तुम्हें भी जल्दी यह सब समझ में आ जाएगा – मेरी मानो तो जितनी जल्दी हो सके तुम दूसरी नौकरी ढूँढ़ लेना' -- उस समय उसे रवि अंकल की बात सुनकर बहुत दुख पहुँचा था। वह डेरी से सीनियर प्लाण्ट सुप्रिंटेण्डेण्ट के पद से रिटायर हुए थे और उसके पापा के क्लासमेट थे। उन्हें वह क्या बताता कि नौकरी पाना क्या इतना आसान है -- पिछले एक साल से वह नौकरी की तलाश कर रहा है अब जाकर उसकी तलाश पूरी हुई है -- उसको शुभकामनाएँ देना तो दूर अंकल उल्टा उसे डरा रहे हैं। सोच-सोच कर वह परेशान हो ही रहा था कि मैनेजर पाठक की आवाज ने उसकी एकाग्रता भंग की – 'मि. दिनकर, डोंट वरी -- आई हेव आलरेडी इंस्ट्रक्टेड मि. आशुतोष टू ज्वाएन यू इन नाइट टिल यू गेट एकस्टम्ड आफ द वर्किंग आफ द प्लाण्ट।'

उसने यह सुनकर कुछ रिलेक्स्ड महसूस किया -- चार दिनों में उसने प्लाण्ट की कार्य प्रणाली काफी कुछ समझ ली – स्टाफ से भी उसका परिचय हो गया था। इतने समय में उसे अहसास हो गया था कि नौकरी करना आसान काम नहीं है। उसे खुद को प्रूव करने के लिए बहुत मेहनत करनी होगी – नौकरी ज्वाएन करने के पहले अफसरी के जो सपने सँजोए थे उनके लिए यहाँ कोई अवसर नहीं है – यहाँ का काम बिल्कुल अलग तरह का है। स्टाफ से काम कराने से लेकर समय पर दूध की सप्लाय सुनिश्चित करने तक बहुत सारी जिम्मेदारियाँ उसके कन्धों पर आ गई थी। इण्डेपेण्डेंट चार्ज सम्हालने के पहले ही दिन उसका बॉयलर ऑपरेटर यासीन से पंगा हो गया। वह समय पर उपस्थित नहीं हुआ -- उसने उसको अब्सेण्ट कर दिया। यद्यपि उसकी अनुपस्थिति में प्लाण्ट ऑपरेटर सुमेर सिंह ने बॉयलर चालू कर लिया था और सभी कण्टेनर्स को स्टीम वॉश भी कर दिया था। यासीन ने देरी से आने के बाद भी उससे मिलने की जरूरत नहीं समझी और उसके सामने से एक भद्दी सी गाली देते हुए चला गया। वह उस समय केमिस्ट से कितना मिल्क पॉवडर मिलाया जाना है, की जानकारी ले रहा था। उसने यासीन को गाली देते हुए सुन तो लिया था लेकिन उस समय अनसुना करना ही उसे बेहतर लगा। अंकल की बात उसे याद आ गई थी कि डेरी में बहुत नेतागिरी है और उसे कई परीक्षाओं से रोज गुजरना होगा।

इस बात को चार दिन हो गए। यासीन भी समय पर आने जाने लगा था --

लेकिन उसके लिए चुनौतियों की कमी नहीं थी। उस दिन वह रात को तीन बजे अचानक ही अपने चेम्बर से उठ कर प्लाण्ट की और चला आया था - देखा - रामरतन, सिया चरन, मनसुख और जग्गी जग में दूध लेकर पी रहे थे। उसने चारों को डाँट दिया - साथ ही इसका पैसा उनके वेतन से वसूल करने की धमकी दी। यासीन पास ही खड़ा यह सब देख रहा था। जब वह चेम्बर की ओर वापस लौट रहा था उसके कानों में यासीन की आवाज पड़ी - 'नया-नया मुल्ला बना है ज्यादा प्याज खाएगा ही - अरे कुछ नहीं होगा, तुम लोग ऐसी घुड़कियों से डरो मत -- ऐसे कितने ही निकाल दिए हैं अबतक नीचे से।'

उसके तन वदन में आग लग गई लेकिन वह कुछ सोचकर चुप रहा आया। अगले दिन फिर उसके सामने विकट स्थिति उत्पन्न हो गई। वह केमिस्ट अजीत सक्सेना के रजिस्टर के पन्ने पलट रहा था - जिसमें वह प्रतिदिन सोसायटीवार आनेवाले दूध का फेट परसेण्टेज दर्ज करता था - अचानक एक इण्ट्री पर उसकी नजरें ठिठक गईं। उसे गड़बड़ी की आशंका हुई। कल ही उसके सामने रायला मण्डल और फुलबाड़ी सोसायटीज से आने वाले दूध की जाँच सक्सेना ने की थी तो उसमें निकले फेट और रजिस्टर में दर्ज फेट में आधे किलो का अन्तर था। स्पष्ट था सक्सेना द्वारा सोसायटीज को लाभ पहुँचाने के लिए उनका फेट पर्सेण्टेज बढ़ाकर अंकित किया जा रहा था। उसे मिल्क पॉवडर के रजिस्टर में भी गफलतबाजी लगी -- हर दिन 40-50 किलो पॉवडर की खपत अधिक दर्शाई जा रही थी। सक्सेना से पूछा तो उसने हँसकर टालने की कोशिश की। जब उसके विरुद्ध कार्यवाही करने की धमकी दी तो वह उल्टा उसके काम में दखल ना देने की सीख देने लगा। उसने रात में ही मैनेजर के नाम पूरा विवरण लिखते हुए सक्सेना के विरुद्ध उचित कार्यवाही करने के लिए एक पत्र लिख डाला। उसे उम्मीद थी कि मैनेजर जरूर उचित कार्यवाही करेंगे पर तीन दिन बाद भी मैनेजर ने कोई कार्यवाही नहीं की। उसे लगने लगा कि इस काम में मैनेजर की भी मिली भगत हो सकती है।

अगले दिन दोपहर को साबूलाल सेन मिलने आया। साबूलाल उसकी शिफ्ट का सबसे पुराना कर्मचारी था - वह ज्यादा पढ़ा लिखा तो नहीं था लेकिन प्लाण्ट से सम्बन्धित सारी जानकारी उसे थी। वह अपना काम पूरी जिम्मेदारी से करता था।

''साब आपसे एक बात कहनी है''- साबूलाल दबी जुबान से बोला।

''हाँ, साबू बोलो''

''साब आप यासीन -- सक्सेना जैसे लोगों के बीच में मत पड़ा कीजिए''

''प्लाण्ट अच्छे से काम करे - सभी काम ईमानदारी से हों - सारे रिकार्ड सही रखे जाएँ -- ये सब देखना मेरी जिम्मेदारी है -- मैं नहीं देखूँगा तो फिर कौन देखेगा -

मेरा काम ही क्या है।'' – उसने कहा था – ''मैं तो केवल अनुशासन में रहकर काम करने के लिए कहता हूँ।''

''साब – मैं यह सब नहीं जानता -- पहले भी ऐसे ही काम होता था -- आप मुझे अच्छे लगे इसलिए आपसे कहने चला आया – आप समझदार हैं – बस आप मेरी इतनी बात मान लीजिए -- कुछ दिनों में आपको सब पता चल जाएगा।'' – साबू इतना कहकर चला गया लेकिन उसे अनेक अनसुलझे सवालों के बीच छोड़ गया।

अगले दिन फिर नई मुसीबत से उसका सामना हो गया। जिन दो टेंकरों से प्रतिदिन तीन-तीन हजार लीटर दूध दिल्ली भेजा जाता था उनमें उसे पाँच सौ लीटर दूध का एक गुप्त चेम्बर मिला था -- जिस कारण टेंकर में तीन हजार के स्थान पर साढ़े तीन हजार लीटर दूध भरा जाता था। मतलब हर दिन एक हजार लीटर दूध का गोलमाल किया जा रहा था। रिकॉर्ड बुक्स में यह गड़बड़ी प्लाण्ट की पाइप लाइन में डेड स्टोरेज और वेस्टेज के रूप में दर्शाई जाती थी । उस दिन उसने कोई हंगामा नहीं किया और चुपचाप फोन पर मैनेजर को सब कुछ बता दिया। मैनेजर ने सब ध्यान से सुना और फिलहाल टेंकर को जाने देने के लिए कहा। उस समय उसने टेंकर को जाने तो दिया लेकिन रिकॉर्ड बुक में टेंकर का पुनरू फिजिकल वेरिफिकेशन कराने का नोट लगा दिया। वह दिनभर सोचता रहा -- मैनेजर ने आखिर क्यूँ कोई एक्शन नहीं लिया -- क्या मैनेजर की ईमानदारी दिखावा मात्र है -- वह भी सबसे मिला हुआ है -- और खूब गोलमाल कर रहा है--

शाम को प्लाण्ट पर जाने से पूर्व साबू उससे मिलने आ गया। आते ही बोला – 'साब आपने मेरी बात नहीं मानी ना -- आप सबसे अकेले कैसे लड़ पाएँगे -- आप किसी दिन बड़ी मुसीबत में फँस जाएँगे।'

'साबू – तुम मुझे मुसीबत से बचाना तो चाहते हो पर मैं क्या करुँ -- किससे मदद लूँ मैं -- मेरी समझ में कुछ नहीं आता' उसने साबू से कहा था।

'आपकी कोई मदद नहीं करेगा यहाँ – मैं भी नहीं कर पाऊँगा -- आपको पता है आपने आज जिन टेंकर की रिपोर्ट की है वे किनके हैं।'

'किनके हैं --'

'चेयरमेन भैरूलाल गौतम के साले केशव राम के – सबको पता था कि टेंकर में ज्यादा दूध जा रहा है -- पर किसी ने कभी कुछ नहीं किया – यासीन उनका आदमी है – उसके भाई ने पिछले चुनाव में भैरूलाल के कहने पर किसी को ठिकाने लगाया था -- तबसे वह जेल में है -- यासीन भी पिछले मैनेजर से मारपीट के चक्कर में सस्पेण्ड हुआ

था पर क्या हुआ -- वह एक हफ़्ते में ही बहाल हो गया और मैनेजर का ट्रांसफर कर दिया गया -- सक्सेना उसका पिछलग्गू है -- आप कैसे पार पाएँगे ऐसे लोगों से -- आपको कुछ हो गया तो क्या बीतेगी आपके घर वालों पर -- जैसे आशुतोष बाबू आँख बन्द करके रखते हैं आप भी तो वैसे रह सकते हैं --'

उस रात वह अपने चेम्बर में ही अनमना सा बैठा रहा - ना उसने सक्सेना से कुछ पूछा और ना प्लाण्ट को देखने गया। सुबह दिल्ली जाने वाले दूसरे टेंकर आए थे -- वह देखकर अन्दर ही अन्दर खुश तो हुआ पर निर्विकार बना रहा -- उसने टेंकर में कोई रुचि नहीं दिखाई। सुमेर सिंह ने रोज की तरह उनमें दूध भरा और गेटपास देकर रवाना किया। दो दिन ऐसे ही बीत गए।

दोपहर को जब वह लंच लेकर होटल से लौट रहा था कि मैनेजर का सन्देश आ गया - तुरन्त आफिस में आने के लिए। मैनेजर बहुत गुस्से में था - ''आप ऐसे काम करेंगे -- इस तरह आँख बन्द करके प्लाण्ट चलाएँगे -- पता भी है क्या हुआ है आपकी शिफ्ट में --''

वह हक्का-बक्का था - शब्द उसके गले में अटक गए थे। मैनेजर ने बात चालू रखी - ''सुबह से दूध फटने की शिकायतें आ रहीं हैं - पूरा तीस हजार लीटर दूध आपकी लापरवाही की भेंट चढ़ गया - लाखों के इस नुकसान की भरपाई कौन करेगा - आपकी नौकरी जाएगी सो अलग -- हमारे लिए भी मुसीबत खड़ी कर दी आपने।''

उसे शोकॉस नोटिस मिल गया। कई दिनों तक वह विक्षिप्त सा रहा आया - क्या करे वह, नौकरी को बाय-बाय कह दे - पर क्या गॉरण्टी है -- उसे जल्द दूसरी नौकरी मिल जाएगी - नई नौकरी में भी उसे इन सब चुनौतियों का सामना नहीं करना पड़ेगा - वह हार नहीं मानेगा - वह हार कैसे मान सकता है - घर में सब कितने खुश थे उसकी नौकरी लग जाने के बाद - पापा ने कितनी मुश्किल से लोन लेकर उसे पढ़ाया था -- एक साल से वह ही लोन की किश्त भर रहे थे - अब उसे मौका मिला है पापा का हाथ बँटाने का -- तो वह भाग जाना चाहता है -- और लोग भी तो नौकरी कर रहे हैं -- वह क्यूँ सबके काम में दखल देता है -- सबके साथ मिलकर काम क्यूँ नहीं करता -- वह प्रेक्टिकल क्यूँ नहीं होना चाहता -- सारी व्यवस्था ठीक करने का सारा ठेका उसका तो है नहीं -- मैनेजर को भी सब पता है -- उसने शिकायत भी की थी पर उन्होंने भी कुछ कहाँ किया था - एक बार भी उससे चर्चा नहीं की -- अब दोबारा उससे कोई गलती हुई तो नौकरी गई -- क्या मुँह लेकर जाएगा वापस घर - पापा ने भी तीस साल नौकरी की है - उन्होंने भी सब कुछ सहा ही होगा पर नौकरी तो करते ही रहे ना -- वह भी करेगा नौकरी

-- अच्छे से करेगा -- सबको साथ लेकर चलेगा वह -- किसी से कोई पंगा नहीं -- सबका दोस्त बन कर रहेगा वह --

कई दिनों बाद वह रात में घूमते हुए प्लाण्ट की ओर चला आया था। सब अपने काम में व्यस्त थे। उसने सिया चरन को इशारे से बुलाया, कहा - 'बहुत थकान सी लग रही है -- तुम चाय नहीं पिलाओगे आज।'

सियाचरन अविश्वास से उसका मुँह ताकने लगा। कुछ देर में वह चाय बनाकर उसके चेम्बर में ले आया। साबू के चेहरे पर उभर आई हँसी उससे छुप नहीं सकी। सुबह केम्पस में फिर वही पुराने टेंकर दूध लेने आए हुए थे -- वह दूर खड़ा क्षितिज में धीरे-धीरे सूरज को ऊपर की ओर चढ़ते देख रहा था -- पर अन्दर एक सूरज डूब रहा था।

--- --- ---

स्टेण्ट

बृजभूषण का पूरा परिवार चिन्तानिमग्न था – कारण डॉक्टर ने तत्काल एंज्योप्लास्टी कराने की सलाह दी थी। डॉक्टर सुधाकर पंचोली के शब्द शशिबाला के कानों में बज रहे थे – 'पेशेण्ट की एक आर्टिरी में नब्बे परसेण्ट ब्लॉकेज है और दूसरी में पेंसठ परसेण्ट – तत्काल एंज्योप्लास्टी करना जरूरी है – आप शीघ्र ही दो लाख रुपए जमा करा दें –'

नब्बे परसेण्ट ब्लॉकेज की बात सुनकर पूरा परिवार सन्न रह गया था। पत्नी शशिबाला तो जैसे अपनी सुध-बुध ही खो बैठी थीं। बेटी सुगंध डाक्टर की सलाह के अनुसार तुरन्त एंज्योप्लास्टी कराने की पक्ष में थी जबकि बेटा सुयश एंज्योप्लास्टी कराने से पहले किसी दूसरे विशेषज्ञ डॉक्टर की सलाह लेना चाहता था। वह सुगंध को समझाने की कोशिश कर रहा था – 'पापा की स्थिति स्थिर है अब और वह सबसे बात भी कर रहे हैं – दर्द भी विल्कुल नहीं है – मैने अपने एक दोस्त को बुलाया है उसके चाचा कस्तूरबा में डॉक्टर हैं -- उसके साथ जाकर मैं उनसे मिलकर आता हूँ -- पैसे भी निकालने हैं -- इसके बाद क्या करना है निर्णय करेंगे।'

सुगंध भाई से सहमत नहीं हो रही थी – बार बार वह यही दोहरा रही थी – 'भैया हार्ट का मामला है – याद करो डॉक्टर ने क्या कहा था – जितनी जल्दी हो सके एंज्योप्लास्टी करना जरूरी है -- यदि पापा को कुछ हो गया तो -- नहीं -- नहीं हम रिस्क नहीं ले सकते -- मेरी सहेली नैना के पापा को तो जरा सा दर्द हुआ था और वह अस्पताल तक भी नहीं पहुँच सके थे -- रास्ते में ही उनकी मृत्यु हो गई थी -- भाई आप क्यूँ टाइम खराब कर रहे हैं-- माँ को देखो कैसी विक्षुब्ध सी बैठी हैं -- कुछ बोल ही नहीं रहीं हैं।'

इस बीच दो घण्टे में नर्स तीन बार आकर पूछ चुकी थी – क्या निर्णय किया – पैसे जल्दी जमा करा दीजिए। डॉक्टर ने भी केथेटर अभी निकाला नहीं था – हाथ में

टेपिंग करके उसे बाँध दिया था। उनका कहना था कि एक बार केथेटर निकाल दिया तो फ़िर पैर की धमनी से दोबारा केथेटर डालकर एंज्योप्लास्टी करनी होगी।

सुयश ने कुछ दिनों पूर्व ही व्हाट्सएप पर वायरल हुए हार्ट-सर्जरी से सम्बन्धित एक वीडियो देखा था - जिसे देख कर वह आश्वस्त था कि पापा को कुछ नहीं होगा पर वह बहिन को नहीं समझा पा रहा था -- बहिन ने भी वह वीडियो देखा था परन्तु वह भावनात्मक आवेग में कुछ सुनने को तैयार नहीं थी। उसके लिए यह निश्चित करना मुश्किल हो रहा था कि वह किस डॉक्टर पर विश्वास करे - - वीडियो वाले या पापा का इलाज करने वाले। डॉक्टर तो ईश्वर का प्रतिरूप होता है - डॉ. पंचोली ने तो पापा के सभी टेस्ट कर एंज्योप्लास्टी की सलाह दी है -- उन पर वह कैसे अविश्वास कर सकती है। उसने निश्चित कर लिया - डॉ. पंचोली का कहा ब्रह्म वाक्य के समान है -- उनकी सलाह पर सेकेण्ड थॉट की कोई गुंजाइश नहीं है। हार कर सुयश ने दो लाख का चेक और अनुमति पत्र काउण्टर पर जमा करा दिए। उसी दिन शाम को डॉक्टर ने बृजभूषण की एंज्योप्लास्टी कर दी। सुयश को बाद में डॉक्टर ने बताया कि विलम्ब हो जाने से दूसरी आर्टिरी में ब्लॉकेज पचहत्तर प्रतिशत हो गया था इसलिए दो स्टेण्ट लगाने पड़े थे। एक लाख रुपए सुयश को और भरने पड़े। एक सप्ताह अस्पताल में रखने के बाद नियमित चेक-अप कराने की सलाह के साथ बृजभूषण को छुट्टी दे दी गई।

दो सप्ताह के विश्राम के बाद बृजभूषण ने ऑफिस जाना भी शुरू कर दिया। उनकी दिनचर्या भी थोड़े बदलाव के साथ पूर्ववत हो चली। डॉक्टर की सलाह अनुसार वह नियमित रूप से घूमने जाते, व्यायाम करते और समय पर दवाएँ लेते। शशिबाला के चेहरे पर भी रंगत लौट आई थी और सुगंध भी बड़ी खुश थी। पर सुयश ना जाने क्यूँ खुद को संयत नहीं कर पाया था -- बार-बार उसे वीडियो में बताई गई बातें कचोटती रहती थी कि किस तरह अनेक डॉक्टर आवश्यक ना होने के बावजूद कमीशन के लिए कई-कई टेस्ट करा डालते हैं और मोटी फीस के लिए आपरेशन करने से नहीं झिझकते। जरूरी दवाइयों के साथ कुछ गैर जरूरी दवाईयाँ लिखना तो बहुत कॉमन सा है। पर जो हुआ सो हुआ - अब पापा स्वस्थ हैं -- खुश हैं तो ज्यादा सोच-विचार क्या करना। जब उसने सुगंध के मुँह से यह सुना कि उसने आज पापा को गुनगुनाते देखा है तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ। ऑपरेशन के बाद धीर- गम्भीर हो चुके पापा फिर से अपने पुराने ह्युमरस मूड में इतनी जल्दी आ जाएँगे -- यह उसने सोचा भी नहीं था।

तीन माह के अन्दर ही सब कुछ सामान्य हो चला था। बृजभूषण दो-एक बार गोष्ठियों में भी भाग ले आए थे। एक बार सपरिवार सिने पेलेस में बाजीराव मस्तानी भी देख आए थे। सुगंध को एम.बी.ए. के तीन हफ्ते के स्टडी टूर पर हैदराबाद जाना था पर वह उन्हें छोड़ कर जाने को विल्कुल भी इच्छुक नहीं थी। उन्होंने ही उसे मनाया। सुयश भी अपनी एम.टेक. की पढ़ाई में पूरा ध्यान लगाने लगा था। शशिबाला भी कॉलोनी की किटी पार्टियों में सक्रिय हो गईं थी। यानी कि जिन्दगी पहले की तरह पटरियों पर लौट आई थी अपनी पूरी ठसक के साथ।

बृजभूषण घूमने के बहुत शौकीन थे। हर साल पूरा परिवार गर्मियों अथवा सर्दियों की छुट्टियों में किसी न किसी हिल-स्टेशन या फिर किसी दर्शनीय स्थल पर घूमने अवश्य जाता था। बच्चों ने बीमारी में जिस तरह उनका ख्याल रखा था वह उन्हें अक्सर याद आता। वह चाहते थे कि इस बार भी कहीं बाहर जाकर कुछ समय बच्चों के साथ बिताया जाए। सुगंध के एग्जाम के बाद उन्होंने एक सप्ताह के लिए ऊंटी जाने का कार्यक्रम बना लिया। सुयश के प्रोजेक्ट का काम चल रहा था लेकिन वह भी इस अवसर को मिस करने के मूड में नहीं था। एक सप्ताह तक उसने दिन-रात एक कर अपने हिस्से का काम निपटाया।

छुट्टियों को सबने खूब एन्जॉय किया। पायकारा लेक पर बच्चों की फरमाइस पर बृजभूषण ने अपना पसन्दीदा मस्ती वाला गाना भी गाया - 'समन्दर में नहा कर और भी नमकीन हो गई हो -- अभी आया है प्यार का मौसम और रंगीन हो गई हो' -- बेचारी शशिबाला - 'अरे ये कौन सा गाना लेकर बैठ गए' - कहते हुए शर्म से लजाती रही। बच्चों ने इन अनूठे पलों का वीडियो भी शूट किया। बोटैनिकल गॉर्डन, मुदुमलाई वाइल्ड-लाइफ सेंक्चुरी, कुन्नूर सभी स्थानों पर सबने खूब मस्ती की। बच्चे पापा को पुरानी रंगत में देखकर बहुत खुश थे। इस खुशगवार टूर से लौटते हुए सब तरोताजा थे और असीम ऊर्जा से भरे हुए थे।

दस दिन बाद ही परिवार को एक और शुभ सूचना मिली। बृजभूषण का प्रमोशन हो गया और उनको वहीं हेड ऑफिस में ही पदस्थ कर दिया गया। इस खुशी में उन्होंने एक छोटी सी पार्टी दी -- सुयश और सुगंध के कुछ दोस्त भी पार्टी में शामिल हुए -- डॉक्टर पंचोली को भी बुलाया था पर वो नहीं आए -- पर सुयश के दोस्त राघव के साथ उसके अंकल डॉ. नीरज अवस्थी अप्रत्याशित रूप से पार्टी में आए। पार्टी से जाते समय उन्होंने सुयश को बुलाकर कहा - 'योर पापा इज रियल जीनियस एण्ड फुल ऑफ़ इनर्जी -- ऐसे जिन्दादिल इंसान को दिल की बीमारी कैसे हुई

-- आश्चर्य होता है -- तुम अगले हफ्ते गुरुवार को उनकी रिपोर्ट लेकर हमारे क्लीनिक पर आ जाओ -- मैं भी उनकी सारी रिपोर्ट देखना चाहता हूँ।'

सुयश नहीं चाहता था कि पापा या सुगंध को इस बारे में कुछ पता चले -- पापा अपनी सामान्य जिन्दगी जीने लगे हैं उन्हें वह फिर से किसी तरह के तनाव में डालना नहीं चाहता था -- और सुगंध पता नहीं क्या-क्या सोचने लग जाएगी। उसने चुपचाप बृजभूषण की सभी रिपोर्ट्स निकाल कर अपने पास रख लीं।

एक हफ्ता यूँ ही गुजर गया। शाम को सुयश रिपोर्ट दिखाने डॉक्टर नीरज अवस्थी के पास गया। बृजभूषण घर पर लौटे तो कोई नहीं था -- सुगंध कोचिंग से नहीं आई थी और सूर्यबाला अपनी मासिक किटी पार्टी में गईं हुई थी। उन्होंने कपड़े बदले और सांध्यकालीन अखबार जो वह प्रतिदिन ऑफिस से लौटते हुए खरीद लेते थे, लेकर अपने कमरे में आ गए।

सुयश लौटा तो विचलित था और गुस्से से भरा हुआ भी। सुगंध उसे बाहर ही मिल गई। भाई को परेशान सा देखा तो बोली - 'क्या हुआ -- भैया, प्रोजेक्ट में कोई समस्या है क्या?'

'नहीं -- डॉक्टर नीरज अवस्थी से मिलकर आ रहा हूँ -- पापा की रिपोर्ट देखकर पता है उन्होंने क्या कहा।'

'क्या कहा' - सुगंध किसी आशंका से सुयश का मुँह ताकने लगी।

'उन्होंने कहा - पापा को कोई बड़ी समस्या ही नहीं थी - सब कुछ सामान्य था -- नब्बे परसेण्ट ब्लॉकेज की बात झूठी थी -- एक माह की दवा से सब ठीक हो जाता -- एंज्योप्लास्टी की आवश्यकता ही नहीं थी।'

सुयश की बातें सुनकर सुगंध को साँप सूँघ गया। उसे कुछ सूझ ही नहीं रहा था क्या बोले। वह हतप्रभ सी भाई को निहारे जा रही थी। तभी शशिबाला भी आ गईं । दोनो को वहाँ देखा तो पूछा -- 'तुम लोग बाहर क्यूँ खड़े हो -- पापा नहीं आए क्या अब तक।'

'पापा तो बहुत पहले ही आ गए थे -- घर पर कोई नहीं था तो नींद लग गई है उन्हें- मैं अभी उनको चादर उड़ा कर आई हूँ' - सुगंध ने कहा।

'आज बहुत देर हो गई -- सात बज गये -- किटी पार्टी के बाद सविता के घर जाना पड़ा -- अगले माह उनकी बेटी की शादी है -- गहने और कपड़े खरीद कर लाई हैं तो वही दिखाने ले गईं - देखो पापा जाग रहे हों तो उनके लिए चाय बना दें' - शशिबाला ने कहा।

सुगंध बृजभूषण के कमरे में देखने गई -- वहाँ से उसकी चीख सुनाई दी - 'भैया देखो - पापा को क्या हो गया है।'

सब बदहवास से उनके कमरे में पहुँचे - देखा बृजभूषण पलंग पर निष्तेज से लेटे हुए हैं, सिर तकिए से नीचे की ओर ढुलका हुआ है -- सीने पर सांध्यकालीन पेपर रखा है -- सुयश ने छूकर देखा-- शरीर ठण्डा पड़ चुका था -- नाड़ी भी गायब थी।

सभी किसी अनहोनी की आशंका से काँप उठे। सुयश ने डॉक्टर नीरज अवस्थी को फोन किया। फिर पापा के सिर के नीचे ठीक से तकिया जमाया। पेपर को उठाकर एकतरफ रखना चाहा तो उसकी नजर एक हेडलाइन पर अटक गई - 'पंचोली क्लीनिक पर छापा - अनेक गड़बड़ियाँ उजागर।' वह पेपर उठाकर पढ़ने लगा - 'आज सुबह स्वास्थ्य विभाग और विजीलेंस की टीम ने संयुक्त रूप से पंचोली क्लीनिक पर छापा मारा। कुछ दिनों से क्लीनिक में अनियमितताओं की अनेक शिकायतें प्राप्त हुईं थी। पिछले छह माहों में क्लीनिक में हार्ट सर्जरी और एंज्योप्लास्टी करानेवाले मरीजों की संख्या आश्चर्यजनक रूप से चार गुनी बढ़ गई थी - हृदयरोगियों की संख्या में अचानक हुई इस वृद्धि से स्वास्थ्य विभाग के अधिकारी सकते में थे। जाँच के दौरान रिकॉर्ड में जहाँ भारी गड़बड़ियाँ मिलीं वहीं स्टॉक में नकली और एक्सपायरी डेट के स्टेण्ट पकड़े गए। इन स्टेण्ट की डेट पिछले साल नवम्बर में ही समाप्त हो चुकी थी। पिछले सात माह से यही स्टेण्ट मरीजों को लगाए जा रहे थे --- 'खबर पढ़ते हुए सुयश को चक्कर आ गए -- वह गिरते गिरते बचा। एक नजर उसने बृजभूषण के चेहरे पर डाली और जोर से चीख मारकर रो पड़ा।

--- --- ---

सलामी

जगवा की यही अन्तिम इच्छा थी कि उसके मरणोपरान्त उत्तम नगर झुग्गीबस्ती के कुछ बुजुर्ग व्यक्तियों एवं पार्षद की उपस्थिति में उसकी झुग्गी का पंचनामा तैयार किया जाए और टिन के बक्शे में रखे काग़ज़, जिसे वसीयत कह सकते हैं, के अनुसार कार्यवाही की जावे। टिन का बक्शा खुलते ही सबकी आँखें फटी रह गई। उसमे से नोटों के बण्डल निकलते जा रहे थे। जब गिनती की गई तो तीन लाख पैंसठ हज़ार की राशि निकली। अक्सर फांकाकशी करने वाले और पैसे-पैसे के लिए मोहताज जगवा के पास इतनी संपत्ति -- उसके आगे पीछे भी कोई नहीं था जिसके लिए अपना पेट काटकर उसने इतना पैसा जमा कर रखा हो। जब वह लोगों से कहता कि उसके मरने के बाद उसकी सम्पत्ति का पंचनामा पार्षद की मौजूदगी में ही बनाया जाए तो लोग पींठ पीछे हँसते थे। खाने को दाने नहीं और सेठ-साहूकारों की तरह सम्पत्ति की चिन्ता।

जगवा कौन था अधिकतर लोग उसके बारे में ज्यादा कुछ नहीं जानते थे। बीस-बाईस साल पहले जब उत्तम नगर झुग्गी बस्ती बसाई गई थी तबसे वह यहीं रह रहा था। उसने शादी भी नहीं की थी। एक सरकारी स्कूल के सामने खोमचे का ठेला लगाकर अपना खर्च चलाता था। बस्ती के लोगों से उसकी ज्यादा बोलचाल भी नहीं थी। बल्देव चाचा से वह आते जाते राम-राम कर लिया करता था और कभी-कभार जमुना पहलवान के साथ गप्प सड़ाका करते देखा जाता था। बारह-तेरह साल हुए जब जगवा काफी बीमार हुआ था तब जमना ने ही उसकी देखभाल की थी। इसके बाद तो उसके लिए खोमचे का ठेला लगाना भी मुश्किल होने लगा था -- फिर भी वह हफ्ते में दो-तीन दिन किसी तरह ठेला लगाता। पर इस बीच एक अजीब सी ख़बर मिली - बम्बई से कोई संस्था उसको हर माह अढ़ाई हजार रुपए भेजने लगी थी। गाँव वालों के लिए ये कौतुहल वाली बात थी कि बम्बई से कौन उसे ये पैसा भेज रहा है -- क्या

सम्बन्ध है उसका जगवा से। लोग तरह-तरह की बातें करते - गाँव वालों को जगवा बड़ा रहस्यमय लगने लगा था। एक दिन पोस्टमैन को घेरकर बल्देव चाचा ने इस बारे में पूछना चाहा पर उन्हें ज्यादा जानकारी नहीं मिल सकी सिवा इसके कि कोई सुनील भाई हैं जो जगवा को पैसे भिजवा रहे हैं।

तीन साल पहले जमना की अचानक मृत्यु होने के उपरान्त से उसका पाँच साल का पोता ईसुरी जगवा के घर पर ही ज्यादा समय बिताने लगा था। जगवा के साथ रहने से शारीरिक रूप से उसमें काफ़ी परिवर्तन आ गया था। उसका शरीर गठा हुआ और सजीला लगने लगा था। उसने ही बल्देव चाचा को सबसे पहले जगवा के न रहने की सूचना दी थी।

बक्शे में पैसों के अतिरिक्त एक बड़ा लिफ़ाफ़ा भी मिला जिसमें पुराने अख़बारों की कतरनें और कुछ फोटो थे। एक अन्य लिफाफे में दो पत्र थे। पैसों की तरह ही अख़बारों की कतरनें देखकर भी लोग अचम्भित थे। ईसुरी ने एक फ़ोटो पर उँगली रख कर बताया - ''ई देखब -- दद्दू इण्डोनेसिया के सकरनो के साथ हाथ मिलावत हैं -- और ई देखो -- दद्दू को चाँदी का तमगा दिए रहे वो।''

लोगों को ईसुरी की बात समझ में ही नहीं आई - क्या बताना चाह रहा है वह। बस्ती से रिटायर्ड नरेंद्र मास्साब को बुलाया गया - उन्होंने अख़बार की कतरने और चाँदी के तमग़े को देखा तो रो पड़े - ''हमारे बीच से एक हीरो चला गया -- हम उसे पहिचान ही न सके -- वह तो देश का सपूत था -- गुमनाम मर गया -- उसने एशिया में पहलवानी में चाँदी का पदक जीता था -- इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति सुकर्णो ने उसे सम्मानित किया था तब।।।''

सभी लोग नरेंद्र मास्साब की ओर डबडबाई आँखों से देख रहे थे। उन्होंने लिफाफे में रखे एक पत्र को पढ़ना शुरू किया जो जगवा ने सोनीपत के रामसुभग अखाड़े को लिखा था - ''भाई जी परनाम -- मैं हमारे पोते जैसे ईसुरी को आपके पास भेज रहा हूँ - बड़ा होनहार बच्चा है और बहुत मेहनती है -- मुझे उसमें विश्व विजेता दिखाई पड़ता है -- आप उसे अपनी सरन में लेकर उसके हुनर को चमका दीजिए -- हमारे ऊपर इतनी किरपा कीजिए। जगवा''

सबने ईसुरी की ओर देखा जो अब तक रोए जा रहा था। मास्साब ने जल्दी से दूसरा पत्र खोला और पढ़ने लगे जो बम्बई के सुनील भाई को लिखा था - ''आपने मुझ पर जो किरपा की उसके धन्यवाद के लिए हमरे पास सब्द ही नहीं हैं। हम अभारी हैं आपके कि आप जैसे देश के इतने बड़े खिलाड़ी को हम जैसे छोटे लोगों का इतना

ध्यान रहा। पर सुनील भैया जी -- हम आपके भेजे रुपए नहीं ले सकत -- हमारा ज़मीर इसकी इजाज़त नहीं दे रहा -- हम जैसे अनपढ़ और ज़ाहिल को देश की सेवा करने का मौक़ा मिला यही हमरे लिए बहुत सौभाग्य की बात है। हम इस सेवा का मूल्य नहीं ले सकत। आपके पैसे हमरे पास सुरक्षित हैं -- जैसे ही हमें कोई सही आदमी मिलेगा हम वो पैसा आप तक वापस भेज देंगे - आपका जगवा''

पत्र समाप्त होते-होते हर आँख में पानी छलछला आया था। सबके हाथ जगवा को सलामी देने के लिए उठ चुके थे।

--- --- ---

पुरस्कार

रतन लाल सांगवान बड़े उत्साहित थे उस दिन। कलफ़ लगी चमकती पगड़ी और अचकन पहिन कर वह खेल विभाग के समारोह में आए थे। उनकी शिष्या रीना बहल को उस दिन प्रदेश के मुख्य मंत्री इक्कीस लाख की पुरस्कार राशि से सम्मानित करने वाले थे। प्रदेश सरकार ने रीना के पहले कोच के लिए भी पाँच लाख के पुरस्कार की घोषणा की थी। इस घोषणा से उनके दूसरे शिष्य बहुत उत्साहित थे। वही उन्हें तैयार कर समारोह मे लेकर आए थे। समारोह स्थल की चमक धमक देखकर वह अत्यन्त भावविहल हो उठे थे।

उनकी शिष्या रीना बहल रातों रात सारे देश की चहेती बन गई थी। खेलों के महाकुम्भ में जब भारत के सारे नामचीन खिलाड़ी एक के बाद एक हार कर पदकों की रेस से बाहर हो रहे थे तब एक तरह से खेलों की दुनिया में अनजान सी रीना ने काँस्य पदक जीतकर देश की लाज रखी थी। अपनी इस विजय से जहाँ वह सुपरस्टार बन गई वहीं उस पर पैसों की बरसात भी होने लगी। केन्द्र सरकार से लेकर राज्य सरकारों ने लाखों के नगद पुरस्कारों की घोषणा की -- कुछ कार्पोरेट घरानों ने भी उसके साथ खाने-पीने एवं पेय पदार्थों के विज्ञापन अनुबन्ध करने की पेशकश की। सामान्य भारतीय परिवार में जन्मीं और पली-बढ़ी रीना और उसके परिवार के लिए यह सब अचम्भित करने वाला था। उनमें से किसी ने भी कभी इतनी दौलत पाने की कल्पना सपने में भी नहीं की थी।

रीना का परिवार तो प्रारम्भ में उसके खेलों में भाग लेने के ही सख्त ख़िलाफ़ था। उन्होंने तो स्कूल के स्पोर्ट्स टीचर रतन लाल सांगवान को डाँटकर घर से ही भगा दिया था। पर धुन और लग्न के पक्के रतनलाल ने हार मानना सीखा ही नहीं था। उन्होंने रीना की माँ को विश्वास में लेकर रीना को कोचिंग देना प्रारम्भ किया। उन्हें पूरा विश्वास था कि रीना एक दिन बहुत आगे तक जाएगी -- क्यूँकि पहली बार जब

उन्होंने रीना को एक लड़की को पटकनी देते देखा था तभी उन्होंने रीना में छुपी नैसर्गिक प्रतिभा को पहिचान लिया था और उसे निखारने का संकल्प ले लिया था।

जूडो की पहली राष्ट्रीय स्पर्द्धा में ही रीना ने रजत पदक जीता -- पर इससे पूर्व उसे और रतन लाल को काफी भला-बुरा सुनना पड़ा था। उसके ताऊ जी के लड़के करतार सिंह बहल ने तो रतन लाल का कॉलर पकड़ कर मारने की धमकी तक दे डाली थी। पदक जीतने के बाद घर वालों का गुस्सा कुछ कम हुआ। अगली प्रतियोगिता में रीना ने स्वर्ण पदक जीता। सीनियर वर्ग की पहली स्पर्द्धा मे उसे रजत पदक मिला। अगले साल भी उसने रजत पदक जीता -- और उसका चयन नेशनल कोचिंग केम्प के लिए हो गया। तत्पश्चात उसने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। दो बार नेशनल चौम्पियन बनने के बाद उसे पहले एशियाई चौम्पियनशिप में और फिर खेलों के महा कुम्भ में देश का प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य मिला जहाँ काँस्य पदक जीत कर उसने नया इतिहास रचा था। राज्य सरकार ने उसकी इस अप्रतिम उपलब्धि पर इक्कीस लाख और उसके पहले कोच को पाँच लाख रुपए के पुरस्कार की घोषणा की थी। राज्य के खेल विभाग ने समारोह से पूर्व उससे उसके पहले कोच के विवरण का फ़ार्म भरवाया था।

रतनलाल समारोह में आने के बहुत इच्छुक नहीं थे पर उनके दूसरे शिष्यों ने उन्हें आने के लिए विवश किया था। रीना की गौरवपूर्ण उपलब्धि के लगभग दो माह बाद इस समारोह का आयोजन हो रहा था परन्तु इस बीच रीना से उनकी मुलाक़ात नहीं हो पाई थी। रीना पूरे देश में अपना सम्मान कराने में व्यस्त रही थी।

तालियों की करतल ध्वनि ने उनका ध्यान भंग किया। मुख्य मंत्री जी पधार चुके थे। उनके साथ ही रीना और उसका परिवार भी आया था। रीना को देखते ही रतन लाल ने हाथ उठाकर उसे शाबाशी देनी चाही पर रीना ने उनको देखकर नज़रें दूसरी ओर घुमा ली। चेहरे पर झलक आई निराशा को अपने शिष्यों से छुपाते हुए रतन लाल हँसने लगे - 'आज इस पण्डाल में शायद ही कोई मुझसे ज्यादा खुशक़िस्मत होगा।'

रीना की उपलब्धियों का यशगान करने के उपरान्त उदघोषक ने जब पुरस्कार के लिए उसका नाम पुकारा तो पूरे पण्डाल में तालियों का सैलाब आ गया। पुरस्कार ग्रहण करने के उपरान्त रीना से उदबोधन के लिए अनुरोध किया गया। अपने संक्षिप्त उदबोधन में उसने माँ- पिता और मुख्यमंत्री जी को अपनी उपलब्धि का श्रेय दिया -- पर वह रतन लाल सांगवान का नाम लेना भूल गई।

इसके बाद कोच को सम्मानित करने के लिए मुख्य मंत्री जी आगे की ओर आ गए। उदघोषक द्वारा नाम पुकारे जाने के पहले ही रतन लाल को उनके शिष्यों ने कन्धों पर उठा लिया। उदघोषक ने घोषणा की -- 'अब मुख्य मंत्री जी उस व्यक्ति को सम्मानित करेंगे जिसने हमारे देश की इस महान खिलाड़ी को तराशा और इस योग्य बनाया कि वह देश के खेल इतिहास में स्वर्णिम अध्याय लिख सके। मैं अति श्रद्धापूर्वक उनको यहाँ आमंत्रित करता हूँ -- उन गुरूश्रेष्ठ का नाम है श्री करतार सिंह बहल।'

घोषणा सुनते ही सब स्तब्ध रह हए। रतनलाल को उनके शिष्यों ने एक झटके में नीचे उतार दिया। सब एक दूसरे से नज़रें चुरा रहे थे -- और करतार सिंह पुरस्कार लेने धीरे-धीरे मंच की सीढ़ियाँ चढ़ रहा था।

--- --- ---

त्याग

दर्शक दीर्घा में ओल्गा मिलोस्लावा को देखकर डेनिस स्टीवेंसन में नई स्फूर्ति का संचार हो गया। ट्रेप शूटिंग के फ़ायनल मुक़ाबले में उस समय वह चौथे स्थान पर चल रहा था और केवल ग्यारह शॉट लेने ही शेष रह गए थे। पहले स्थान पर चल रहे कोरियाई शूटर किम जोंग जिन और उसके बीच दो अंकों का अन्तर था। पाँच परफ़ेक्ट स्कोर के साथ वह तीसरे नम्बर पर आ गया और नौवें शॉट के बाद दूसरे। दसवाँ शॉट किम चूक गया। उसने ओल्गा की ओर देखा। ओल्गा आँख बन्द कर ईश्वर से दुआ माँगने की मुद्रा में थी। स्टीवेंसन ने स्वयं को एकाग्र किया और वह एक बार फिर सही निशाना साधने में सफल रहा। स्कोर बराबर हो गया। अन्तिम शॉट में दोनों ने ही सही निशाने लगाए और मुक़ाबला टाई ब्रेकर में चला गया। स्चीवेंसन थोड़ा नर्वस नजर आने लगा और गफ़लत मे पहला ही निशाना ग़लत लगा बैठा। विश्व चौम्पियन किम के सभी निशाने सटीक रहे और स्टीवेंसन को रजत पदक से सन्तोष करना पड़ा। स्टीवेंसन के लिए खेलों के महाकुम्भ में रजत पदक जीतना भी एक उपलब्धि ही था -- विश्व रैंकिंग में वह तेरहवें क्रम पर था और अंतिम छः में भाग्य के सहारे पहुँचा था।

उसने हाथ हिला कर ओल्गा के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। ओल्गा ने खड़े होकर फ्लाइंग किस उसकी ओर उछाला। वह अभिभूत हो उठा। गत सप्ताह ही बीजिंग के अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर उनकी पहली मुलाक़ात हुई थी जब अमेरिकी और चेक रिपब्लिक की टीमें खेलों के महाकुम्भ में भाग लेने वहाँ पहुँची थी। दोनों की आँखें मिली -- और दोनों ने ही अपने भीतर जलतरंग की स्वर लहरी महसूस की -- पियानो पर जैसे लुडविग वीथोवेन ने कोई प्रेमिल राग बजा दिया हो। देश और भाषा से परे दोनों के बीच हडसन और वलतावा नदियों की स्निग्ध मिश्रित-धारा प्रवाहित होने लगी । आँखें भी प्रेम के पखेरुओं को क़ैद करके नहीं रख सकीं । दोनों को ही लगा वे एक

दूसरे के लिए ही बने हैं । पर एयरपोर्ट पर दोनों की कोई बात नहीं हो सकी । यह इत्तफ़ाक़ था कि खेल गाँव में अमेरिकी और चेक टीमों को एक ही ब्लॉक में रखा गया। अमेरिकी फ्लेग होस्टिंग सेरेमनी में स्टीवेंसन ओल्गा को देखकर चौंक गया। तब पहली बार दोनों की बातचीत हुई -- पर ओल्गा को अंग्रेज़ी नहीं आती थी और न स्टीवेंसन को चेक। दोनों केवल यह जान सके कि ओल्गा को बटरफ़्लाई स्वीमिंग में भाग लेना है और स्टीवेंसन को शूटिंग में।

रात में स्टीवेंसन ने गूगल की सहायता से कुछ चेक शब्द सीखे और ओल्गा ने अंग्रेज़ी के। सुबह ब्रेक फ़ास्ट पर ओल्गा ने जैसे ही गुड मार्निंग कहा स्टीवेंसन के मुँह से प्रतिउत्तर में ''डोबरे रेनो'' सुनकर वह खिलखिलाकर हँस पड़ी -- एक निश्छल और निर्मल हँसी। स्टीवेंसन ने उसका हाथ पकड़ कर चूम लिया - ''जसी क्रास्ना'' (तुम बहुत खूबसूरत हो)

ओल्गा लजा गई पर जाते जाते बोल गई - ''मिलौजी ते'' (मैं तुमसे प्रेम करती हूँ) स्टीवेंसन कुछ समझ नहीं सका पर उसके मन में टयूलिप के सैकड़ों फूल लहलहाने लगे थे।

ट्रेप शूटिंग के क्वालिफ़ाइंग दौर में स्टीवेंसन सातवें नम्बर पर रहा था और फ़ायनल की दौड़ से बाहर हो गया था। दूसरी और ओल्गा ने बटरफ़्लाई की दोनों स्पर्द्धाओं के फ़ायनल में अपना स्थान पक्का कर लिया था। उसे लग रहा था कि उसके कारण ही स्टीवेंसन पिछड़ गया है और अब उसे ख़ाली हाथ अमेरिका लौटना पड़ेगा।

ओल्गा ने स्टीवेंसन की मौजूदगी में 200 मी. बटरफ़्लाई का स्वर्ण पदक जीता पर उसके चेहरे पर जीत की वह अहर्निश ख़ुशी नहीं थी जो स्टीवेंसन के चेहरे पर थी। पर उसी दिन शाम को अनहोना हो गया और उसके चेहरे पर ख़ुशियों के अनगिनत तारे झिलमिलाने लगे। ट्रेप शूटिंग के अर्हता दौर मे पाँचवें स्थान पर रहे चीनी निशानेबाज को प्रतिबन्धित ड्रग बीटा ब्लॉकर प्रोप्रानोलोल लेने के कारण अयोग्य ठहरा दिया गया था -- और स्टीवेंसन को फ़ायनल में जगह मिल गई थी।

एक दिन बाद ही फ़ायनल मुक़ाबला था पर उसी दिन लगभग उसी समय पर ओल्गा का 100 मी. बटरफ़्लाई का फ़ायनल भी था । स्टीवेंसन नर्वस था - ओल्गा ने उसे इशारों में समझाया था कि इस अवसर को वह हाथ से जाने न दे -- दुनिया को प्रेम की शक्ति दिखाने का यह स्वर्णिम अवसर है।

पदक वितरण के लिए तैयारी हो रही थी। इस बीच स्टीवेंसन को जैसे ही

मौक़ा मिला वह ओल्गा के पास जा पहुँचा -- और उसे बाँहों मे भरकर कई बार चूम लिया। ओल्गा ने भी कृपणता नहीं की और उसने भी स्चीवेंसन के होंठों पर अपनी छाप अंकित कर दी। फिर जैसे अचानक ही स्टीवेंसन को कुछ याद आया -- इस समय तो ओल्गा का 100 मी.बटरफ्लाइ का अन्तिम मुक़ाबला निर्धारित था। पूछा तो ओल्गा टाल गई। प्रेम जीत गया था -- त्याग प्रेम का ही एक स्वरूप है।

--- --- ---

मकान

डोरबेल की आवाज सुनकर मनोहर लाल ने दरवाजा खोला तो सामने खड़े अपरिचित व्यक्ति ने हाथ जोड़ कर उन्हें नमस्ते किया। बोला– 'मैं सुखवानी प्रापर्टीज से आया हूँ -- आपका मकान देखने -- किसी ग्राहक से सौदा करने से पहले मकान का मूल्यांकन करना जरूरी है।'

'ये मकान तो मेरा है और मैं तो इसे बेंचना नहीं चाहता– आपको कोई गलत फहमी हुई है'– मनोहर लाल ने आश्चर्य से आगन्तुक की और देखते हुए कहा।

'सी–142 कंचन बाग, यही पता दिया था हमें मकान देखने के लिए'

'पता तो यही है – आपके साथ किसी ने मजाक किया है – मुझे ये मकान नहीं बेंचना है'

'मयंक बंसल का मेल आया था हमारे पास कि पन्द्रह दिनों में उन्हें मकान बेंचना है।'

मयंक बंसल का नाम सुनते ही मनोहर लाल को चक्कर सा आ गया। आगन्तुक ने उन्हें सहारा दिया और किसी तरह अन्दर ले जाकर सोफा पर बैठाया। कुछ देर में जब मनोहर लाल संयत नजर आने लगे तो वह कल या परसों फिर आने का कह कर वापस चला गया।

मनोहर लाल अन्यमनस्क होकर पलंग पर लेट गए। उनकी तन्द्रा को नेत राम ने आकर भंग किया – 'बाबू जी कपड़े और पानी रख दिया है आप नहा लीजिए– पूजा का सामान और फूल भी ले आया हूँ'

'अरे तू आ गया – मेरी झपकी लग गई थी'

'बाबू जी कुछ तबियत खराब है क्या?'

'नहीं रे– तू बाजार गया था सामान लाने तो पेपर पढ़ कर बस यूँ ही लेट गया था'

मनोहर लाल ने नहाकर प्रतिदिन की तरह गायत्री मन्त्र का जाप किया और शिव पुराण के इक्कीस श्लोक पढ़े। खाना खाकर जैसे ही वह अपने कमरे में आराम करने आए सुबह वाला प्रसंग फिर उनकी आँखों के सामने आकर खड़ा हो गया। मयंक पन्द्रह दिनों में ये मकान बेंचना चाहता है -- उसे ध्यान नहीं क्या कि अभी मैं जिन्दा हूँ और इसी मकान में रह रहा हूँ -- अमेरिका में रहते हुए कैसे बेंचेगा मकान -- आखिर क्या है उसके मन में और क्या चाहता है। मुझसे तो उसने इस बारे में बात ही नहीं की और सीधे प्रापर्टी डीलर को मकान देखने भेज दिया --

इसी उधेड़बुन में उनकी आँख लग गई जब आँख खुली तो नेतराम चाय लिए पास ही खड़ा था। घड़ी देखी छह बज रहे थे।

''बाबू जी आज बहुत देर तक सोये रहे आप -- थके-थके भी लग रहे हैं -- चाय पी लीजिए फिर हाथ-पैर दबा देता हूँ।''

''नहीं नेत राम -- मैं अब ठीक हूँ -- चाय पीकर थोड़ा टहलने चलते हैं।''

मनोहर लाल रोज ही नेत राम के साथ टहलने जाते थे। सतहत्तर साल की उमर में नेत राम उन्हें अकेले नहीं जाने देता था -- जब भी वह कहीं जाते नेत राम उनके साथ जाता था। आज मनोहर लाल का मन टहलने जाने का नहीं था लेकिन कुछ तो क्रम भंग न करने की इच्छा और कुछ क्लान्त मन को शाम की शीतलता से ठंडक पहुँचाने की चाहत उन्हें ले गई।

नेतराम डिनर की तैयारी कर रहा था कि मयंक का फोन आ गया - ''पापा जी कैसे हैं आप - मैं आज सुबह ही बोस्टन से बंगलौर आया हूँ कम्पनी के काम से - एक सप्ताह का काम है इसके बाद एक सप्ताह की छुट्टी ले ली है तब आता हूँ मैं आपसे मिलने।''

''मैं भला-चंगा हूँ बेटा - नेत राम हमारा पूरा ख्याल रखता है - आज कोई प्रापर्टी डीलर आया था तुम्हारा नाम लेते हुए।''

''हाँ मैने ही बोला था उसे कि मैं भारत आ रहा हूँ तो वह मकान देख कर आकलन कर ले -- मेरे सामने ही मकान का सौदा हो जायेगा तो अच्छा रहेगा।''

''पर बेटा तुमने मुझसे पूछा तक नहीं कि मैं क्या चाहता हूँ - अभी तो मैं यहाँ रह रहा हूँ - नेतराम भी साथ में रहता है।''

''पापा ठीक है ना -- नेतराम अपनी व्यवस्था कहीं ना कहीं कर लेगा -- बार-बार तो मैं यहाँ आ नहीं सकता -- अभी आया हूँ तो सोचा ये काम भी निपटाता चलूँ।''

''और मेरे बारे क्या सोचा है मैं कहाँ रहूँगा।''

'पापा आप कैसी बातें कर रहे हैं – आप मेरे साथ चलेंगे –– मैं वहाँ आकर आपके वीसा रिन्यूवल के लिए फॉर्म भर दूँगा –– जब तक आपका वीसा रिन्यू होगा आप किसी ओल्ड एज होम में रह लेना –– वहाँ देखभाल भी अच्छे से होती रहेगी।'

मनोहल लाल को मयंक की बात का कोई उत्तर देते नहीं बना। वह चुप रहे। कुछ अन्तराल के बाद मयंक की ही आवाज आई – 'मैं अभी रखता हूँ पापा – कुछ क्लाइंट गेस्ट आ गए हैं उनके साथ डिनर के लिए जाना है – बाय पापा।'

मनोहर लाल ने बड़ी मुश्किल से दो रोटियाँ खाईं – खाईं क्या जबरन ठूँस ली कि नेत राम फिर कुछ पूछताछ ना करने लगे। बिस्तर पर लेटे तो यादों का पिटारा खुलने लगा । जब मयंक जन्मा था तो कैसे इस निर्जीव मकान की दीवारें भी बोलने लगी थीं। दद्दा जी के ना रहने के बाद मयंक का आगमन बसंत की तरह था। शारदा ने जब मयंक को अम्मा की गोदी में रखा था तो उन्होंने अम्मा की सूनी आँखों में फिर से इंद्रधनुष उतरते देखा था। मयंक की किलकारियों ने ही अम्मा के मन में फिर से जीने की ललक जगा दी थी। शारदा की ममता को तो जैसे पूर्णता मिल गई थी। विवाह के आठ साल बाद ईश्वर ने उसकी गोद भरी थी। वह तो एक तरह से बावरी हो गई थी। पल भर के लिए भी मयंक का आँखों से ओझल होना उसे सहन नहीं होता था।

मयंक स्कूल जाने लगा तो शारदा कमरे की दीवारों से बातें करती रहती – दीवारों को छूकर उसके स्पर्श को महसूस करती –– किलकारियों को सुनने की कौशिश करती – जमीन पर लेट कर उसके पदचाप की आहट सुनती ––

दिन बीते पर शारदा की दिनचर्या नहीं बदली। मयंक जब इंजीनियरिंग करने पुणे गया तो शारदा छुप–छुप कर महीनों आँसू बहाती रही। उसके पास जैसे कोई काम ही नहीं रह गया –– नितान्त अकेली रह गई। तभी एक दिन मनोहर लाल नेत राम को लेकर घर आए – 6–7 साल का अनाथ बच्चा जो उन्हें सिहोरा रेल्वे स्टेशन पर बेसुध हालत में मिला था। शारदा के लिए वह मयंक तो नहीं बन पाया लेकिन वह उसका पूरा ध्यान रखती। नेतराम भी अपनी उमर से कहीं ज्यादा परिपक्व था। वह भी शारदा की हर बात मानता – सदा उनकी सेवा को तत्पर रहता – बहुत से ऊपरी काम वह स्वयं कर देता। उसका एडमीशन भी शारदा ने पास के स्कूल में करा दिया – उसका होमवर्क भी वह जाँचती और उसे पढ़ाती भी। मयंक जब भी छुट्टियों में आता तो नेत राम भी शारदा के साथ व्यस्त रहता। भैया से वह गणित के सवाल पूछता और उनके होस्टल के किस्से सुनता।

इंजीनियरिंग करते ही मयंक को एक मल्टी नेशनल कम्पनी में जॉब मिल गई। पहली पोस्टिंग हैदराबाद में मिली। नेतराम और शारदा मयंक के साथ हैदराबाद गए। मनोहर लाल माँ को अकेला छोड़कर नहीं जा सकते थे। वे दोनों तीन दिन वहाँ रहे और एक पी.जी. में उसके रहने की व्यवस्था करने के उपरान्त ही लौटे।

दो वर्ष पश्चात कम्पनी की और से मयंक को एम.आई.टी. से मास्टर्स करने का ऑफर मिला। पूरा खर्चा कम्पनी दे रही थी - सुनहरा अवसर था, मयंक छोड़ना नहीं चाहता था। अम्मा और शारदा उसके अमेरिका जाने के विरुद्ध थे। उनकी नजर में अमेरिका केवल गोरी मेमों का देश था जो उनके संस्कारी लड़के को अपने रूप के मोहपाश में बाँध लेंती। पर मयंक के सामने नया आसमान था। विश्व के सर्वश्रेष्ठ संस्थानों में गिने जाने वाले संस्थान में पढ़ने के नाम से ही वह अभिभूत था। मनोहर लाल ने बेटे की इच्छा और उत्साह को देखते हुए अम्मा और शारदा दोनों को मनाया। शारदा तो समझ गई पर शायद अम्मा नहीं समझ पाई। मयंक के जाने के चार महीने पश्चात ही वह चल बसीं - शायद अन्दर ही अन्दर वह घुटती रही थी। जरा से ऐशो-आराम की जिन्दगी के चक्कर में मयंक का सात समन्दर पार जाना वह दिल पर ले बैठी थी।

मयंक का मास्टर्स पूरा हुआ तो कम्पनी ने उसे फिलाडेल्फिया के ऑफिस में ही नियुक्ति दे दी - एक लाख डॅलर से ज्यादा का पैकेज था उसका। इतनी ऊँची छलाँग -- उसने कल्पना भी नहीं की थी। शारदा उसे वापसी के किए गए वादों की याद दिलाती तो वह हँस कर टाल देता। उल्टा उसने उन दोनों को पासपोर्ट बनवाने के लिए विवश किया। इसके बाद तो उसने किसी ट्रेवल-एजेण्ट के जरिए दोनों के वीसा की व्यवस्था भी कर दी -- केवल उन्हें इंटरव्यू की खानापूर्ति के लिए मुम्बई के काउंसुलेट ऑफिस जाना पड़ा। अमेरिका जाते हुए मनोहर लाल मन ही मन बेटे का शुक्रिया कर रहे थे कि उसके कारण उनकी विदेश घूमने की अतृप्त इच्छा पूरी हो रही है। शारदा इस मामले मे निर्विकार थी - उसे केवल मयंक से मिलने की खुशी थी। उसका वश चलता तो वह मयंक को आँचल में लपेट कर वापस ले आती।

दोनों तीन माह अमेरिका में रहे। मयंक ने दोनों की सुख-सुविधाओं का पूरा ध्यान रखा। खूब सैर कराई - न्याग्रा फाल, न्यूयार्क और वाशिंगटन अपने साथ ही घुमाने ले गया। वाशिंगटन के स्पेस और वार म्यूजियम देख कर मनोहर लाल अभिभूत हो गए। लौटने से कुछ दिन पूर्व दोनों को वह एम.आई.टी. केम्पस दिखाने बोस्टन भी ले गया। विश्व प्रसिद्ध हॉवर्ड यूनिवर्सिटी भी उन्होंने देखी। इस सबके बीच उन्होंने

महसूस किया कि मयंक अमेरिकी माहौल में रम गया है - साफ-सुथरे परिवेश, नियमित जीवन-शैली, अनुशासित समाजिक-व्यवस्था ने उसे पूरी तरह अपने रंग में सराबोर कर दिया है।

वापसी में शारदा पूरे समय गुमसुम बैठी रही। पन्द्रह घण्टों के सफर में उसने केवल पोटेटो चिप्स खाए और दो बार ओरेंज जूस पिया।

समय अपनी चाल चलता रहा। एम.टेक. करने के बाद मयंक तीन साल में केवल एक बार भारत आया था। शारदा ने बहुत कौशिश की वह कुछ दिन रुके और शादी करके वापस जाए। उसने कुछ लड़कियों के रिश्ते शॉर्टलिस्ट करके भी रखे थे पर मयंक 'अभी कुछ दिन और रुको माँ' कहकर टाल गया।

कुछ महीनों बाद अचानक मयंक का फोन आया - 'माँ मैं अगले रविवार को शादी कर रहा हूँ - घबराओ नहीं इंडियन लड़की है - मेरे साथ काम करती है - देवप्रिया गांगुली नाम है उसका - बहुत दिनों से साथ रह रही थी -- आप लोग आ सकें तो टिकट भेज दूँ।'

पता नहीं मयंक गलती से बोल गया था या जानबूझ कर उसने कहा था पर शारदा सुन कर टूट सी गई - उसे अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हुआ। बिना शादी किए साथ-साथ -- राम-राम -- क्या सुना दिया भगवान। मनोहर लाल ने शारदा को किसी तरह समझाया भी था कि अमेरिका में सब चलता है - वहाँ लिव-इन रिलेशंस को कोई अन्यथा नहीं लेता। बिना शादी के वहाँ बच्चे तक हो जाते हैं -- पर हर तीज-त्योहार पर नियम से वृत रखने वाली शारदा को कहाँ कुछ समझ में आने वाला था। अमेरिका मे चलता होगा यह सब - पर अपना मयंक तो ऐसा नहीं था -- कितने लाड़-प्यार से पाला था -- पता नहीं कहाँ गलती हो गई उसकी परवरिश में -- क्या कमी रह गई हमारे दिए संस्कारों में --। शारदा ने शादी में जाने से इंकार तो कर दिया पर अन्दर ही अन्दर कसमसाती रही -- टूटती रही। मनोहर लाल उसकी मनोदशा समझ रहे थे -- वह खुद भी बेचैन थे पर अपने गम का सैलाब वह किसी तरह नियन्त्रित किए हुए थे।

इस बीच नेत राम ने बारहवीं कक्षा पास कर ली। उसका एडमीशन भी ऊँटी के होटल मैनेजमेण्ट इन्स्टीट्यूट में हो गया पर उसने जाने से मना कर दिया। मनोहर लाल ने उसे बहुत समझाया पर वह टस से मस नहीं हुआ - यही कहता रहा कि वह कोई छोटी-मोटी नौकरी ढूँढ़ लेगा पर आप लोगों को छोड़कर कहीं नहीं जाएगा। उसको नहीं उड़ना अनन्त आकाश में कि अपने नीड़ का रास्ता ही भटक जाए। उसे

छोटी सी चिड़िया ही बने रहना है जो सदा आँगन में ही फुदकती रहे।

समय पंख लगाए उड़ता रहा। समय ने शारदा को कुछ-कुछ सम्हाल लिया था पर उसकी सूनी-सूनी आँखों में अब भी मयंक का इंतजार था कि वह आयेगा - अपने उसी पुराने निश्छल रूप में और लिपट कर माफी माँगेगा। वह शायद आता भी था हर रोज उसके सपनों में -- पर माफी माँगने नहीं -- कुछ और ऊँचाई पर उड़ जाने के लिए - मनोहर लाल ने कितनी ही बार शारदा को सोते-सोते चौंक कर उठते हुए देखा था। वह दिलासा देते रहते और शारदा शून्य में निहारती रहती। शुरू-शुरू में रोज बतियाने वाला मयंक सप्ताह में एक बार बात करने लगा -- फिर क्रम दो हफ्ते में हो गया और अब तो माह भर से ऊपर हो जाता है उसकी आवाज सुनने को कान तरस जाते।

अन्दर ही अन्दर घुलते हुए शारदा ने एक दिन बिस्तर पकड़ लिया। डॉक्टर की सलाह पर वह और नेतराम कुछ दिन ऋषिकेश और मंसूरी के सुरम्य स्थानों में भी उन्हें सैर कराने ले गए - आबो-हवा बदलेगी तो तबियत बहलेगी पर कुछ खास फर्क नहीं पड़ा। मनोहर लाल ने भाँप लिया था कि शारदा और उनका साथ बस कुछ दिनों का है। उन्होने मयंक को फोन किया कि माँ की तबियत बहुत खराब है एक बार आकर उन्हें देख जाए। मयंक ने स्पष्ट तो कुछ नहीं कहा लेकिन उसकी बातों से मनोहर लाल बहुत कुछ समझ गए - ''पापा 8-10 दिनों में मेरे प्रोजेक्ट की लांचिंग है -- इस समय बहुत काम है एक बार प्रोजेक्ट पूरा हो जाए फिर मैं आता हूँ -- तब तक आप और नेत राम माँ का ख्याल रखना।''

दो माह निकल गए। शारदा को आई.सी.यू. में शिफ्ट करना पड़ा। बीस दिन उन्हें वेण्टीलेटर पर रखना पड़ा -- पर इन्तजार की भी कोई सीमा होती है - आत्मा कब तक देह में कैद रहकर मोह-माया में बँधी रहती - मुक्त हो गई। मनोहर लाल अकेले रह गए। नेतराम कई दिनों से अपने शिक्षाकर्मी के पोस्टिंग ऑर्डर का इंतजार कर रहा था - वह भी उसी दिन आया और शाम होते-होते अमेरिका से मयंक का फोन भी - ''पापा आप दादा बन गए - पोती हुई है।''

मनोहर लाल अपने आँसू नहीं रोक पाए। फोन उनके हाथ से छूट गया। नेत राम ने मयंक को सारा किस्सा सुना दिया। वह चुपचाप सुनता रहा - शायद रोया भी हो -- लेकिन देवप्रिया को इस हालत में छोड़कर वह नहीं आ सकता था - नेत राम को अपनी विवशता बताता रहा। प्रोजेक्ट खतम होते ही उसे बोस्टन में कम्पनी के कॉर्पोरेट ऑफिस का हेड बना दिया गया था वह चाह कर भी माँ को देखने नहीं आ पाया था।

कुछ दिनों में मयंक आने वाला है यह सोच-सोच कर मनोहर लाल की व्यग्रता बढ़ती जा रही थी। शारदा जिस घर में दुल्हन बन कर आई थी उसी की ड्योढ़ी से विदा होकर चली भी गई। जिस घर के कौने-कौने में वह मयंक की खुशबू से ही स्वयं को सुरभित महसूस करती रही उसकी जड़ें तो यहाँ है ही नहीं। नन्हें मयंक की पदचापों के चिन्ह उसकी नजर में कभी धुँधले ही नहीं पड़े थे -- वह उस जमीन को छूकर कितनी ताजगी महसूस करने लगती थी कितना रोमांचित हो जाती थी। पगली थी वह -- समझ ही नहीं पाई कि ये पगचिन्ह नहीं - उसके पंख थे जिनने उसे आसमान में इतनी ऊँचाई पर ले जाकर उड़ना सिखा दिया था जहाँ से जमीन दिखती ही नहीं है - फिर जड़ों, अहसासों और संवेदनाओं का क्या --।

मयंक की ट्रेन सुबह पाँच बजे पहुँचनी थी -- राइट टाइम थी। आधे घण्टे बाद वह घर पर था - नेत राम इन्तजार ही कर रहा था। मनोहर लाल के जागने का समय नहीं हुआ था। नेत राम ने मयंक के लिए चाय बनाई। तब तक रोशनी खिड़कियों से झाँकने लगी थी । मयंक ने घर के हर कमरे को जाकर देखा सब कुछ पहले जैसा ही था। दीवारों के रंग फीके पड़ चुके थे। कई जगह से प्लास्टर भी उखड़ा हुआ था। उसने नेतराम से पूछा - ''लगता है दो-तीन सालों से पुताई नहीं हुई है -- इस हालत में कौन खरीदेगा इसे - आधी कीमत भी नहीं मिलेगी।''

नेत राम ने कोई उत्तर नहीं दिया। घड़ी देखी - सात बज चुके थे। वह मनोहर लाल के लिए चाय बनाने लगा। मयंक कमरे में रखी चीजों को देखने लगा। नेतराम ने देखा मनोहर लाल टेबल पर सिर टिकाए बैठे हैं -- उसकी आहट सुनकर भी वह यथावत बैठे रहे। नेतराम ने चाय टेबल पर रख दी और उन्हें हिलाते हुए बोला- ''बाबू जी चाय''

मनोहर लाल का सिर एक ओर लुड़क गया। शरीर ठण्डा हो चुका था। वह रोने लगा। मयंक दौड़ कर ऊपर आया। मनोहर लाल दुनिया छोड़कर जा चुके थे। टेबल पर कुछ कागज बिखरे थे - मयंक उठाकर पढ़ने लगा जो उन्होने नेत राम को सम्बोधित कर लिखे थे - प्रिए नेतराम, मयंक भैया को माँ का कमरा जरूर दिखा देना - वहाँ अब भी उसकी आत्मा बसती है वहाँ की हवा आज भी मयंक की खुशबू से सराबोर है -- उससे कहना एक बार पंख समेटकर आकाश से नीचे उतरे और महसूस करे यह सब -- तुम घर की पुताई करवा देना नहीं तो अच्छी कीमत नहीं मिलेगी -- इस काम के लिए बचत के तीस हजार रुपए तकिए के नीचे रखे हैं -- मैं तुम्हें कुछ नहीं दे सका -- मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है -- तुम अपनी नौकरी ज्वाइन

कर लेना और हाँ मेरे कमरे की अलमारी में शारदा का मंगलसूत्र और कंगन रखे हैं -- उसकी इच्छा थी बहू को देने की - अधूरी इच्छा लिए चली गई -- तुम शीघ्र शादी कर लेना और शारदा की इच्छा जरूर पूरी करना। बेटे मुझे माफ करना -- मैं जीते जी आत्मा और खुशबू का सौदा होते नहीं देख सकता था -- इसलिए जा रहा हूँ -- विदा।

--- --- ---